891.8
4010

पानी बोला

बालकों को पानी की बूँद मिलती है। वह उनको सागर की बात सुनाती है। अपने घोड़े हवा की बात सुनाती है। अपनी सखी किरन की शैतानियों का वर्णन करती है। वह अपने पेट के पाँच थैलों का भेद बता देती है। वह आग खाकर जीती है; इंजन चलाती और भाँति-भाँति के रूप बदलती है।

पानी जीवन है, वह ओला, पाला और हिम है। बादल और कोहरा है। प्रातःकालीन घास पर चमकते हुए ओस के मोती भी पानी हैं। पानी धरती पर है और आकाश में है। वह काव्य में और विज्ञान में है। जब पानी बोलता है, संसार बोलता है। पानी की वाणी हमारे जीवन की वाणी है।

'पानी बोला' में सरल और सुबोध भाषा में पानी की उत्पत्ति, उसके गुणों तथा अनेक रूपों का वर्णन किया गया है। हिन्दी के बाल-साहित्य में यह विज्ञान-सम्बन्धी अपने ढंग की एक-मात्र पुस्तक है।

पानी बोला

लेखक
रामचन्द्र तिवारी
सिद्धि तिवारी
रचयिता—'धरती माता', 'नीला आकाश' 'आग के चमत्कार'
वायु का 'सन्देश'

१६५२
आत्माराम एण्ड संस
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
काश्मीरी गेट
दिल्ली

प्रकाशक
रामलाल पुरी
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली।

१९५२
मूल्य
२ रुपये चार आना

मुद्रक
श्यामकुमार गर्ग
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस
२७ शिनाश्रम, क्वीन्स रोड दिल्ली।

पुस्तक के विषय में

बालक हों चाहे बूढ़े; हमारी कहानी की भूख कभी बुझती नहीं। कथा जब जोर पकड़ती है, तो सम्भव-असम्भव सब भूल जाता है केवल आनन्द शेष रह जाता है। प्रस्तुत पुस्तक में जल की नाना-क्रीड़ाओं का वर्णन आत्मकथात्मक कहानियों के रूप में किया गया है। जल की बूँद रमा और अशोक को अपनी जोखिम और जीवट से भरी कथाएँ सुनाती है; और यह बालक बूँद, बर्फ, पाला और ओला सभी के आत्मीय बन जाते हैं। पानी ने अपनी कथा बालकों को सुनाई है, पर उस कथा का आनन्द सब के लिए है।

जल काव्य और विज्ञान दोनों का विषय है। कथाओं में कुछ रूप-कातिशयोक्तियाँ हैं। गम्भीर पाठकों को उनको समझने में कुछ कठिनाई हो सकती है। इस प्रकार की कठिनाई के निराकरण के लिए पुस्तक के अंतिम अध्याय से कुंजी का काम लिया जा सकता है। 'पानी की बात' जल के विषय में एक लेख है जिसमें लगभग सभी प्रकार की मोटी-मोटी सूचनाएँ इकट्ठी कर दी गई है।

रामचन्द्र तिवारी
सिद्धि तिवारी

क्रम

पानी बोला

१

बादल से भेंट

दिनेश भाई था और रमा बहन। दिनेश नौ बरस का था और रमा छः बरस की। दोनों को खेलना बहुत भाता था। वे घर से घूमने निकले। सामने एक पहाड़ी थी। उसे देखा तो दोनों दौड़ पड़े। वे दौड़े और खूब दौड़े, गिरते गए, पड़ते गए और दौड़ते गए। वे पहाड़ी पर चढ़ गए। थके तो एक शिला पर जा बैठे। उन्होंने देखा कि घर दूर है और बहुत छोटा-सा दिखाई देता है।

दिनेश—इस पहाड़ी पर बादल आते हैं रमा!

रमा—बादल भी कोई हमारी तरह बच्चे हैं जो पहाड़ियों पर चढ़ते फिरते हैं?

दिनेश—बादल हमारी तरह पैरों से दौड़ दौड़कर नहीं आते, वे हवा में उड़-उड़कर आते हैं।

रमा—तो क्या बादल में चिड़िया होती है?

दिनेश ने दिखाया—लो, वह बादल आ गया। अचानक पहाड़ी पर धुन्ध-सा छा गया। उनके हाथ और चेहरे गीले हो गए।

रमा—यह बादल है भैया?

दिनेश—हाँ, यह बादल है।

रमा—मेरा सारा हाथ गीला कर दिया इस बादल ने। रूमाल दें तो उसे पोंछ डालूँ।

दिनेश ने रूमाल निकाला तो रमा के हाथ पर से आवाज आई—"रमा जीजी, अपना हाथ न पोंछना, अपना हाथ न पोंछना। मैं तुम्हारे हाथ जोड़ता हूँ।" दिनेश और रमा चौंके। यह कौन बोला?

रमा के हाथ पर से सुर आया—यह मैं पानी हूँ जो बोल रहा हूँ। मैं तुम्हारे हाथ पर लगा हुआ पानी बोल रहा हूँ। मुझे न पोंछना। मैं थक गया हूँ। मुझे थोड़ी देर आराम कर लेने दो।

रमा ने हथेली फैलायी तो पानी की बूंद बोल पड़ी

दिनेश—पानी भाई, तुम थक कैसे गए ?

पानी—कुछ न पूछो। बड़ी मुसीबत थी। मुझे सुस्ता लेने दो।

रमा—तुम्हारे ऊपर और मुसीबत ? क्यों हमें बहका रहे हो ?

दिनेश—क्या मुसीबत थी बताओ ?

पानी—तुम लोग बालक हो, तुम्हें क्या बताऊँ ?

दिनेश—नहीं बताते तो हम तुम्हें पोंछे डालते हैं।

इतना सुना तो पानी काँप उठा। गिड़गिड़ाकर बोला—मेरे ऊपर दया करो। मुझे पोंछो मत। मैं तुम्हें अपनी विपत की कहानी सुनाता हूँ।

रमा—सुनाओ। अभी सुनाओ। जल्दी सुनाओ।

पानी तब रमा के हाथ पर आसन लगाकर बैठ गया। उसने छाती फुलाई, गरदन मटकाई, आँखें चमकाईं और कहने लगा—यदि तुम पहाड़ी से उतरो, अपने घर जाओ, वहाँ भी रुको नहीं, दक्खिन को चलते ही चले जाओ। बस चलते ही चले जाओ तो तुम एक बहुत बड़े तालाब के किनारे पहुँच जाओगे। उस बड़े सरोवर में इधर देखोगे तो पानी, उधर देखोगे तो पानी, जिधर देखोगे पानी-ही-पानी। जानते हो उस तालाब का क्या नाम है ?

रमा—क्या वह तालाब हमारे गाँव की झील से भी बड़ा है ?

पानी—तुम्हारे गाँव की झील को तो वह चुटकी बजाते ही मसल डालेगा।

दिनेश—मैं जान गया पानी भाई, तुम सागर की बात कह रहे हो।

रमा—क्या वही सागर; जिसे समुद्र कहते हैं और जिसमें जहाज चलते हैं। मैंने जहाज का चित्र देखा है।

पानी ने शान के साथ गरदन हिलाई। बोला—वही समुद्र, वही सागर। बस मैं उसी में आराम कर रहा था। सो रहा था। पता नहीं कितने दिन तक सोता रहा। एक दिन जब नींद खुली तो मैंने अँगड़ाई ली। आँखें खोलीं तो चारों ओर अँधेरा-ही-अँधेरा। मुँह पर हाथ फेरा तो पाया कि एक बड़ी मछली मेरी नाक से चिपटी हुई है और दो चार छोटी-छोटी मेरे कानों को पकड़े हुए हैं। मैं जागा तो मछलियों ने काटना आरम्भ किया। कोई इधर से काटे, तो कोई उधर से काटे। मैं आफ़त में पड़ गया। घबराकर मैंने दोनों हाथों से कमर पकड़ी और पैर उठाकर सिर पर रखे। आँखें बंद कीं और भाग उठा। मैं आगे-आगे और मछलियाँ पीछे-पीछे। मुझे भागते देखा तो मेरे भाई-बहन भी भागने लगे। भगदड़ मच गई। भागा-भाग पड़ गई। कोई इधर भागा, कोई उधर भागा। जिसका जिधर सींग समाया वह उधर भागा। वह घमासान मचा कि समुद्र में तूफ़ान आ गया।

दिनेश—पानी भाई, जरा ठहर जाओ। पहले अपने भाई-बहन का नाम बता दो। पीछे आगे की बात करना।

पानी—घबराते क्यों हो? अभी बताता हूँ। मेरे हजारों मछलियाँ चिपट गईं, मैं तब भी नहीं घबराया और तुम जरा-सी बात में घबरा गए। मेरी बहन का नाम है पानी की बूँद, और भाई का नाम है पानी का कन।

दिनेश—जल-बूँद और जल-कन।

पानी—हाँ दिनेश राजा! तो रमा जीजी, मैं समुद्र की तली से जो भागा तो समुद्र के ऊपर आ गया। वहाँ मेरी आँखें चौंधिया गईं। तली में था अँधेरा गुप्प और वहाँ बिजली का हंडा जल रहा था।

बिजली का हंडा? रमा ने पूछा—समुद्र में बिजली का हंडा?

पानी ने होठ बिचकाये और बोला—हाँ बीबी रानी, वह हंडा आकाश में लटका हुआ था और ऐसा प्रकाश था उसका कि मैंने जहाँ तक देखा चाँदना-ही-चाँदना था। ऐसा प्रकाश जो देखा तो जी हरा हो गया। मैंने हाथ-पैर फैला दिये और उस हंडे के प्रकाश में लोट लगाने लगा।

दिनेश—पानी भाई, आकाश में कोई बिजली का हंडा नहीं लटकता। तुम ने सूरज देखा होगा, सूरज।

पानी—उस प्रकाश के हंडे को तुम लोग सूरज कहते हो, यह बात मुझे पीछे मालूम हुई। हाँ तो भाई, मैं उस चाँदनी में लोटने लगा। इसी लोट-पोट में मुझे दो सहेलियाँ मिल गईं। उनमें एक सीधी-सादी थी और एक थी बड़ी शैतान। पर जो पहले सीधी-सादी दिखती थी वह भी बाद में महा चंट निकली।

रमा—तुम अपनी सहेलियों के नाम तो बताओ। वैसे ही बेचारियों की बुराई किये जा रहे हो।

पानी—वे इतनी शैतान हैं कि उनके नाम लेते हुए भी मुझे डर लगता है।

नाम तो बताने ही होंगे—दिनेश ने धमकाया।

पानी—तुम लोग नहीं मानते तो मैं बताये देता हूँ। उनमें जो शैतान है उसका नाम है हवा। और जो सीधी-सादी लगती है वह है किरन।

रमा—सूरज की किरन?

पानी—हाँ, सूरज की किरन। जब मैं सूरज की चाँदनी पर लेट लगा रहा था तो हवा ने मेरा पैर पकड़कर खींचा। मैंने पैर छुड़ाने को जो हाथ बढ़ाया तो उसने उछलकर मेरे सिर पर चपत जड़ दिया। मैं झुँझलाया। हाथ बढ़ाकर हवा को पकड़ने का जतन किया। पर वह पकड़ में न आई। मैं मुँह नीचे करके

लेट गया। मैंने बताया कि वह बहुत ही शैतान है। वह चुपके-चुपके आई और न जाने किस उपाय से मेरे नीचे पहुँच गई, और एक तेज फूँक मेरी नाक में मार दी। मुझे ज़ोरों से छींक आई : आक-छीं, आक-छीं। मैं तंग आया और उठ बैठा। तभी किरन मेरे पास आकर बैठ गई।

किरन ? हमने तो किरन को कभी नहीं देखा। रमा ने कहा।

किरन सबको दिखाई नहीं देती। उसकी देह पीली होती है। वह कपड़े भी सदा पीले ही पहनती है। उसके पास एक पीला झोला होता है। उस झोले में वह गरमी भरे रहती है।

दिनेश—किरन पीले कपड़े पहनती है और पीले झोले में गरमी भरे रहती है ?

पानी—हाँ, किरन ने मुझे देखा और मुस्काई। मैं समझा कि यह अच्छी लड़की है। तभी मुझे छींक आई। छींक आने में मेरा मुँह जो खुला तो किरन ने जल्दी से एक कौर ताप मेरे मुँह में डाल दिया। किरन गरमी को ताप कहती है। मैंने जो ताप का एक कौर चखा तो मुझे बड़ा अच्छा लगा। किरन ने पूछा—और खाओगे ताप ? मैंने कहा, हाँ। बस मैं ताप खाता गया और किरन मुझे खिलाती चली गई।

दिनेश—यह बात है। जब तुम बहुत-सा ताप खा गए होगे तो तुम्हारा पेट नगरकोट बन गया होगा।

पानी—हाँ। मैं ज्यों-ज्यों ताप खाता जाता था, फूलता जाता था। पेट फट रहा था। पर ताप का स्वाद मुझे इतना भाया कि खाता चला गया, और फूलकर मैं सचमुच कुप्पा हो गया। किरन ने कहा : "और खाओ।" मैं पेट पर हाथ फेरता रहा और खाता रहा। जब वह मुझे ५३६ कौर खिला चुकी तो मेरा दम फूलने लगा। मुझे लगा कि यदि एक कौर भी और खा लिया तो पेट फट जायगा। मैंने किरन का हाथ पकड़ लिया। वह हठ करने लगी : "खाओ और खाओ।" मैंने अपनी फूली हुई तोंद हिलाई और सिर घुमाता हुआ बोला—नहीं नहीं, मैं अब नहीं खाऊँगा। इसी समय हवा ने मेरे पीछे जाकर ऐसी फूँक मारी कि क्या बताऊँ। मैं पहले औंधे मुँह गिरा। सँभला, तो फूँक का दूसरा झोंका लगा। मैं ऊपर उड़ चला। मैं बहुत रोया गाया, पर हवा ऐसी शैतान थी कि उसने एक न सुनी। मैं रोता था, तो वह हँसती थी। वह कभी मेरे फूँक मारती, कभी चपत लगाती, कभी मुझे सिर से उछालती, और कभी पीठ पर बैठाकर उड़ जाती। सागर के ऊपर वह मुझे घुमाने लगी। पहले तो मैं डरा, फिर मुझे भी मज़ा आने लगा। मैं हवा पर इधर-से-उधर दौड़ने लगा। मेरे और भी

बहुत-से भाई-बहन ताप खाकर ऊपर आ गए। सागर के ऊपर हमारा मेला लग गया। हम लगे खेलने और खेल खेल में गरजने।

दिनेश—तो तुम बादल बन गए थे।

पानी—इतनी देर में हमें पता लग गया कि हवा हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकती। हमने भी शैतानी आरंभ की। कभी हम उसके चिकोटी काट लेते। कभी उसके बाल पकड़कर खींच लेते। और कभी उसके कान में मुँह लगाकर कहते: 'वाह रे घोड़े!' हवा रिसा जाती। फुफकारती हुई ज़ोर-ज़ोर से इधर-उधर भागती। हमें और भी मज़ा आता। हम लोग किलकारी मारते और खिलखिलाकर हँसते।

एक बार ऐसा हुआ कि मैंने हवा के कंधे में ज़ोर से काट खाया। हवा खूब चिल्लाई और मुझे पीठ पर बैठाकर एक ओर को भाग निकली। वह लाखों बार घूमी, लाखों बार उछली और लाखों बार कूदी। पर भागती चली गई। एकाएक मैंने देखा कि सागर तो पीछे रह गया है और हमारे नीचे आ गए हैं, पेड़, वन, खेत, नदी, गाँव और नगर। मैं चिल्लाया: 'हवा सहेली, हवा सहेली!'

हवा ने हँसते हुए कहा—बस इतने में ही डर गए। काटो मुझे। तुम्हारा सिर पहाड़ से न टकराया तो मेरा नाम हवा नहीं। मैंने उसकी बहुत विनती की, पर उसने एक न सुनी। मुझे लेकर दौड़ती ही चली आई। डर के मारे मेरा पेट खाली होने लगा। शरीर सिकुड़ने लगा। मैं बेहोश-सा हो गया। अचानक अभी-अभी मुझे ऐसा लगा कि दो बहुत ठंडे हाथों ने मेरे पेट को पकड़कर दबा दिया है। मेरा सब ताप निकल गया। पेट खाली हो गया। मैं जब होश में आया तो नीचे गिरने लगा। मार्ग में रमा बीबी का हाथ मिला तो पैर टेककर उसी पर ठहर गया।

रमा—तो तुम समुद्र से बादल बनकर यहाँ आये हो?

पानी—हाँ। अब तुम चुप रहो। वह देखो आकाश में बिजली का हंडा जल गया है। मेरी सखी किरन झोले में ताप भरे मेरे पास आ गई है। मुझे कौर-पर-कौर खिला रही है। बड़ा मजा आ रहा है। बस तुम चुप रहो।

तब दिनेश और रमा ने देखा कि पानी का सारा शरीर झूमने लगा है। वह फूलने लगा है। शीघ्र ही वह गुब्बारा-सा दिखने लगा और आँखों से ओझल हो गया। रमा का हाथ सूख गया।

रमा ने कहा—दिनेश चलो, घर चलें।

दिनेश बोला—अम्मा को यह बादल की कहानी सुनाएँगे।

२

ओस की बूँद

जाड़े के दिन थे। रमा और दिनेश सवेरे घर से निकले। धूप में खड़े हुए और गन्ना चूसने लगे। धूप अभी हल्की थी। रमा ने कहा—चलो दिनेश बगीची में चलें, वहाँ से फूल लायँगे तो माला बनायँगे। दिनेश ने कहा—चलो। और दोनों बगीची चल दिए।

बगीची में फूल खिले हुए थे। श्याम श्याम पौधों पर केसरिये फूल, गेंदे के फूल। सुन्दर-सुन्दर और बड़े-बड़े फूल। रमा मोह गई। कैसे अच्छे फूल हैं यह दिनेश भैया! दिनेश ने कहा—पहले गन्ना चूस लो फिर तोड़ेंगे। पर रमा ने गन्ना एक ओर फेंक दिया और फूल तोड़ने के लिए क्यारी में चली गई। उसने एक फूल को हाथ लगाया ही था कि किसी ने कहा—रमा जीजी!

रमा ठिठक गई। उसने चारों ओर देखा वहाँ कोई भी न था। उसने फिर फूल को हाथ लगाया कि फिर वही सुर आया, रमा जीजी! रमा ने दिनेश से कहा—यहाँ आओ, देखो मुझे कोई पुकार रहा है।

दिनेश आया और रमा ने फिर फूल से हाथ लगाया तो फिर वही सुर आया—रमा जीजी!

दिनेश ने डाटकर कहा—कौन है जो रमा को पुकार रहा है। जल्दी बताओ, नहीं तो मैं अभी सारी बगीची को उखाड़कर फेंक दूँगा।

फूल में फिर से आवाज आई—बगीची को न उखाड़ना दिनेश भाई! यह देखने में बहुत सुन्दर लगती है।

दिनेश—तुम कौन हो, जो बिना अपना मुँह दिखाये बोल रहे हो?

आवाज ने कहा—दिनेश भाई मुझे जल्दी अपने हाथ में ले लो। मैं डर के मारे मरी जा रही हूँ। जल्दी करो, नहीं तो यह भयानक पत्ती मुझे फिर निगल जायगी। मैं थर-थर काँप रही हूँ दिनेश भाई!

तुम हो कौन?—दिनेश ने फिर पूछा।

ओस दिनेश की हथेली पर कूद पड़ी

आवाज ने कहा—इधर देखो इधर; मैं फूल के निकट की पत्ती पर पड़ी हुई ओस की बूँद हूँ। ओस की बूँद।

दिनेश ने उस ओस की बूँद को देखा। वह सचमुच डर से काँप रही थी। दिनेश को दया आ गई। उसने हाथ बढ़ाकर उसे पत्ते पर से अपनी हथेली पर झाड़ लिया। दिनेश की हथेली पर जाकर बूँद की जान में जान आई। वह बहुत प्रसन्न हुई और बोली—दिनेश तुम बहुत अच्छे लड़के हो।

दिनेश ने कहा—वह तो मैं हूँ ही। यह सभी जानते हैं। अब तुम यह बताओ कि तुम क्यों डर रही थीं और किससे डर रही थीं ?

रमा ने पूछा—तुम यह भी बताओ कि तुम कहाँ से आई हो और ओस कैसे बनीं ?

बूँद ने अपने मुँह पर हाथ फेरा और गालों को थपथपाया। बोली—मैं तुम्हें अपनी कहानी सुनाती हूँ। तुमने नदी का नाम सुना होगा। जानते हो वह क्या होती है ?

रमा—नदी होती है। उसमें पानी बहता है।

ओस की बूँद ने कहा—नदी बूँदों की सेना को कहते हैं। जब बहुत-सी बूँदें इकट्ठी होकर चल निकलती हैं तो नदी बन जाती हैं। बूँदें सिपाहियों की भाँति आगे-पीछे ही नहीं चलतीं, वे एक दूसरे के कंधों पर चढ़कर भी चलती हैं और पावों में घुसकर भी चलती हैं। सिपाही यदि ऐसी भीड़ में पड़ जाय तो दबकर मर जाय। पर बूँद का कुछ नहीं बिगड़ता। पीछे की बूँदें आगे की बूँदों को धकियाती जाती हैं और बूँदें आगे बढ़ती जाती हैं। एक दिन मैं हिमालय की एक चट्टान पर बैठी थी। उसकी सहेली हवा गुनगुना रही थी। चिड़ियाँ गा रही थीं और सूरज की किरनें बादलों के पीछे से झाँक रही थीं। मुझे बहुत अच्छा लग रहा था। अचानक मन में उठा कि चलो सागर की सैर कर आएँ। पर न कोई हवाई अड्डा पास था और न कोई रेल का स्टेशन ही पास था। टिकट खरीदने को मेरे पास पैसे भी नहीं थे। मैं सोच में पड़ गई कि क्या करूँ ? सागर तक कैसे पहुँचूँ ?

दिनेश—सोचने की बात तो थी ही। बिना पैसे इतनी लम्बी यात्रा कैसे की जा सकती थी ?

रमा—तो तुमने क्या किया ओस के मोती ?

ओस—मैं चिन्ता में पड़ गई। तभी मैंने सुना कि चट्टान के नीचे बहुत-सी बूँदें शोर मचाती जा रही हैं। वे कह रही थीं : 'सागर जाने वाले, आ जाओ। हमारा दल बहुत बड़ा है। वह सागर जा रहा है आओ, हमारे दल में मिल

जाओ। आओ, सागर चलने वाले आओ'; बूँदों की यह वाणी सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हुई, और साँस रोककर उस दल के बीच में कूद पड़ी। बूँदों ने खिल-खिलाकर मेरा स्वागत किया। हमारा दल आगे बढ़ता गया। मार्ग में शिलाएँ हमें रोकना चाहती थीं। वे सामने अड़ जाती थीं। हम लोग उनकी चिन्ता नहीं करते थे। कुछ बूँद शिला के पैरों में होकर निकल जाती थीं। कुछ उसके सिर पर होकर कूद जाती थीं और बहुत-सी थीं जो अगल-बगल से निकल भागती थीं। शिला हमारा कुछ भी नहीं कर पाती थी। मैं सच कहती हूँ। यह शिलाएँ मूर्ख होती हैं, एकदम मूर्ख। उनसे हिला-डुला जाता नहीं, मार्ग रोकने को अड़ जाती हैं। बूँदों के अनेक छोटे-छोटे दल हमें मिले। यह सब दल सड़कों से आते थे। जैसे-जैसे सड़कें हमारे मार्ग में मिलती जाती थीं, तैसे-तैसे हमारा दल बड़ा होता जाता था।

दिनेश ने पूछा—सड़क और मार्ग? बूँदें कहीं सड़कों और मार्गों पर चलती हैं?

ओस ने कहा—हाँ। तुम बिना मार्ग के इधर-उधर आ-जा सकते हो, पर बूँदें तो सदा सड़कों पर ही चलती हैं। हमारी पगडंडी नाली कहलाती है। हमारी छोटी सड़क नाला है। हमारी बड़ी सड़कें नदियाँ हैं। गंगा, यमुना, सतलज, कावेरी हमारी सड़कें हैं। इनमें से होकर बूँदों का दल समुद्र को जाया करता है। हमारा दल भी छोटे मार्ग से बड़े पर आया और फिर उस महामार्ग में मिल गया, जिसे गंगा कहते हैं।

रमा—तो तुम गंगाजी की बूँद हो जो ओस बन गई हो?

ओस ने कहा—हाँ, मैं गंगा के मार्ग से समुद्र की ओर जा रही थी। हमारा दल कथा-कहानी कहता-सुनता बड़े आनन्द से धारा में चला जा रहा था, कि एकाएक हमें अपनी चाल मंद करनी पड़ी। आगे की बूँदों का शोर सुनाई दिया। वे चिल्लाकर कह रही थीं—सावधान, मार्ग बंद है। हम सावधान तो हो गए, पर करते क्या? पीछे की बूँदें हमें बराबर दबाये जा रही थीं। हम पिसे जा रहे थे। एक ने कहा: हमारा यह मार्ग तो युग-युग से चला आया है। कौन रोक सकता है इसे? किसे अधिकार है इसे रोकने का? दूसरे ने कहा—यदि हमें मार्ग नहीं मिलेगा तो हम उमड़कर समस्त धरती को डुबा देंगी। बूँदें कभी क्रुद्ध नहीं होतीं। पर उस समय मुझे ऐसा लगा कि वे क्रुद्ध होने वाली हैं।

रमा—तब क्या हुआ?

ओस—गंगा के तट पर एक मनुष्य खड़ा था। उसने पुकारा—गंगा माई की जय। भगवती भागीरथी की जय! हमने उसकी ओर निहारा। वह हाथ जोड़-

कर बोला—आप क्रोध न करें। तनिक बायें को देखें। एक नया मार्ग आपके लिए तैयार है। हम बायें को घूमे। देखा तो तीन छोटे-छोटे द्वार हैं। हमारा दल उनमें से होकर उछलता-किलकारता आगे बढ़ा, हमारे सामने सचमुच नया माग था। यह मार्ग सुन्दर, साफ़ और एक-सा था। नदी की भाँति उसके किनारे कटे-फटे न थे। हमें मालूम हुआ कि इस मार्ग को मनुष्य नहर कहता है।

दिनेश—अच्छा तो तुम नाले से नदी में गईं और नदी से नहर में आ गईं।

ओस—हाँ। नहर में कोई बाधा न थी। इसलिए हम तेजी से चले। नहर में से एक शाखा निकली थी। हमारा दल इस शाखा में चला गया। शाखा में से एक और शाखा और फिर उसकी भी शाखा। इन शाखाओं में होकर मैं पड़ोस की नाली में आ पहुँची। इधर से उधर आने-जाने की धक्का-मुक्की में हमारे दल की बहुत-सी साथिनें बिछुड़ गई थीं। हमें यह ज्ञात हो गया था कि हम भटक गई हैं और इस यात्रा में सागर तक नहीं पहुँच सकतीं। मुझे इसका दुःख हुआ। पर मैंने तुम बच्चों से सदा प्रसन्न रहना सीखा है। मैं सागर को भूल गई। हवा में लहराती हरी-हरी फसल को देखने लगी। हवा सहेली ने मुझे जो देखा तो मुस्काई, और मेरे बालों को उड़ा गई। वह मेरे कान में कह गई कि इन घासों और पौधों से बचना। यह बूँदों के लिए कारागार हैं जो भाग्यवान होती हैं वही इनके भीतर जाकर जल्दी निकल पाती हैं। अनेक बूँदें इनमें फँस-कर महीनों ही नहीं वर्षों बंदिनी बनी रहती हैं। हवा ने जो चेताया तो मैं साव-धान हो गई। खेत में गई ही नहीं। नाली के एक कोने में चक्कर काटती रही। पूरा एक दिन वहीं घूम-घूमकर बिता दिया। पर जब बूँदों के नये दल आने बंद हो गए तो मैं घबराई। अब क्या होगा?

रमा—क्या हुआ?

ओस—मैंने देखा कि एक काली शिला भागी चली आ रही है। उसने अपना पैर नाली में रखा। मैंने सोचा बस अब इस पैर के नीचे दबे और मरे। उस विपत्ति से बचने को मैं जो उछली तो मेंड़ पार करके इस बगीची में आ गिरी।

दिनेश—वह काली शिला कहाँ गई? हमें तो यहाँ दिखाई नहीं देती।

ओस—वह तो तभी भाग गई। वह मेरी उछाल से डर गई थी।

रमा—काली शिला भाग गई? क्या कह रही हो ओस तुम? शिला कहीं भाग सकती है?

ओस—हाँ, कुछ शिलाएँ ऐसी होती हैं जो भाग सकती हैं। वह देखो, वे रहीं वैसी शिलाएँ।

दिनेश—वे शिलाएँ नहीं हैं ओस बहन! वे भैंसें हैं, वे दूध देती हैं। उनका दूध बहुत अच्छा होता है।

ओस—ओह, यह बात है। मैं यह नाम याद कर लूँ। भैंस, भैंस, भैंस। मैं जब बगीची में आई तो एकाएक मुझमें भूख जाग पड़ी। एक तो मैं दौड़-भाग में थक गई थी, और दूसरे मिट्टी की सोंधी सुगंध जो आई तो मेरा जी मिट्टी खाने को करने लगा। मैं क्यारी में चुपके-चुपके उतरी और बड़े प्रसन्न हृदय से मिट्टी खाने लगी। तुम्हें अचम्भा होता है? बच्चे ही मिट्टी नहीं खाते, बूँदें भी मिट्टी खाती हैं। और वे उस मिट्टी का सत अपने शरीर में रख लेती हैं। सच कहती हूँ इस क्यारी की मिट्टी इतनी स्वाद है कि उसे चखकर मैं मोहित हो गई। आनन्द में तन-बदन की सुध भूल गई। हाथ-पैर फैलाकर एक मिट्टी के खंड के नीचे लेट गई। और अब यहीं वह दुर्घटना हुई, जिससे बचने का मैं घोर जतन कर रही थी।

रमा—क्या हुआ?

ओस—यह जो गेंदे का पौधा तुम देखते हो न; इसके नीचे जड़ें हैं। मोटी जड़ें हैं और उन जड़ों में से बाल के समान महीन अनगिनत जड़ें निकली हैं। ये जड़ें क्यारी की मिट्टी में फैली हुई हैं। उन्होंने मिट्टी के ढेलों को पकड़ रखा है। यह जड़ें बाल-सी महीन तो हैं पर एक-एक के लाखों मुख हैं। और यह बहुत भयानक हैं। जहाँ कोई पानी की बूँद उनके निकट आती है वे उसे पकड़ लेती हैं। मैं आराम से लेटी थी। मैंने अँगड़ाई ली। हाथ जो पसारा तो गजब हो गया। वह जड़ के एक बाल से छू गया। बस उसने तुरंत मेरा हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचना आरम्भ कर दिया। मैंने बहुतेरा बल लगाया पर उसकी पकड़ से छूट न पाई। मैं बहुत रोई-चिल्लाई, पर उस निर्दयी ने मेरी एक न सुनी। उसने मुझे अपने मुँह के भीतर घसीट लिया। इन जड़ों के भीतर बहुत पतली-पतली नलियाँ होती हैं। मुझे उसने उन्हीं में डाल दिया। मैंने कहा—चाहे जान से मार डालो, मैं हिलूँगी नहीं। पर इससे कुछ फल न निकला। मुझे लगा कि कोई है जो उस नली में मुझे ऊपर खींच रहा है। और कोई है जो मुझे नीचे से धक्का दे रहा है। मैंने देखा कि नीचे से दबाने वाले मेरे वही अभागे भाई-बहन हैं जो मेरी ही तरह पकड़े गए हैं। हम धीरे-धीरे ऊपर को सरकते रहे। मार्ग में नलियों का बहुत जटिल जाल हमने देखा। उसी

में हमें चढ़ाया जा रहा था। चढ़ते-चढ़ते मैं उस भयानक स्थान पर पहुँची जिसे पत्ती कहते हैं।

रमा—पत्ती को तुम भयानक कहती हो? वह कितनी कोमल होती है। हरी-हरी कितनी सुन्दर लगती है?

ओस—सुन्दर तो वह मुझे भी लगती है। पर वह है महा भयानक। यह पत्तियाँ डाकुओं के बहुत बड़े अड्डे हैं। यहाँ डाकुओं के दल-के-दल डकैती में जुटे रहते हैं। ये पौधे अपने आप तो अपना भोजन कमा नहीं सकते। डकैती पर जीते हैं। मिट्टी से जो भोजन पानी की बूँदें लाती हैं यह तरह-तरह के उपायों से उस सबको बूँदों के पेट से निकाल लेती हैं। मैं जैसे ही पत्ती में पहुँची कि डाकू मेरे ऊपर झपट पड़े। बोले—जो कुछ तेरे पल्ले है, रख दे सब यहाँ। मैंने कहा—मैं तो बहुत भूखी हूँ, मेरे पास कुछ नहीं है। पर उन्होंने विश्वास नहीं किया। उन्होंने मेरी तलाशी ली। पेट से सब भोजन निकाल लिया, और फिर मार-मारकर मुझे एक अँधेरी कोठरी में बंद कर दिया। पत्तियों में ऐसी लाखों कोठरियाँ होती हैं। इनमें लाखों निरपराध बूँदें कारागार का दुःख सहती रहती हैं।

रमा—बहुत बुरी हैं तब तो यह पत्तियाँ।

ओस—बहुत बुरी हैं। मैं उस कोठरी में पड़ी रही। निकल भागने का अवसर ताकती रही। रात के समय जब वे डाकू सो गए तो मैं पत्तियों के छेदों में से चुपचाप निकलकर बाहर आ गई। पर पत्ती पर से भाग न सकी। मेरी सहेली किरन, जो मुझे भागने की शक्ति देती है, कहीं दिखाई नहीं दी। मैं डर रही थी कि कहीं वे डाकू मुझे पकड़कर फिर पत्ती में न घसीट लें। मैंने सहेली हवा को पुकारा, उससे विनती की कि मुझे पत्ती पर से उड़ा दे। हवा ने फूँकें मारी। जोर-जोर से फूँकें मारी। गेंदे का पौधा झूम-झूम गया। पर हवा मुझको न उड़ा सकी। थर-थर काँपते हुए मैंने रात काटी। तभी तुम आ गए, तुम बहुत अच्छे लड़के हो दिनेश! अपना हाथ तनिक फैला दो। लो, वह मेरी सहेली किरन आ गई। आओ किरन सखी, मैं आज बहुत भूखी हूँ।

रमा ने देखा कि वह बूँद काँपी और फैल गई। दिनेश ने फूँक मारी तो वह ऊपर उठी और हवा में जाकर अदृश्य हो गई।

३

हवा-सवार

गर्मी का दिन था। दिनेश और रमा घर में बैठे थे। बाहर धूप तप रही थी। भीतर तन से पसीना बह रहा था। न काम करने को जी करता था, न खेलने को। रमा ने कहा—बैठे-बैठे मन नहीं लगता। लेटे-लेटे रहा नहीं जाता। आलसी बनना अच्छा नहीं। कुछ-न-कुछ तो करना ही चाहिए।

दिनेश—तो क्या करोगी?

रमा—सोचना होगा। ऐसा काम, जो इस तपन में किया जा सके।

दिनेश—सोच लिया। वह काम, जो तपन में बहुत अच्छी तरह किया जा सकता है।

रमा—क्या?

दिनेश—बरफ डालकर बढ़िया मीठा-मीठा ठंडा शरबत बनायें और प्रेम के साथ पियें।

रमा प्रसन्नता से चिल्ला उठी—यह एक सुन्दर काम है जो गरमी में करने योग्य है।

वे उठे। सुराही से पानी लिया। अँगोछे में से लिपटी बरफ और कटोरदान में से चीनी निकाली। आनंद के साथ शरबत बनाया और फिर दोनों एक एक काँच के गिलास में भरकर बैठ गए। गिलास दोनों के सामने रखे थे पर पीता कोई न था।

दिनेश—रमा, पी नहीं तो शरबत तप जायगा।

रमा—तुम ही पियो पहले। तुम्हारी चालाकी मैं सब समझती हूँ। तुम मुझे पहले पिला दो। जब मेरा शरबत समाप्त हो जाय, तो अपना भरा गिलास दिखा दिखाकर मुझे चिढ़ाओ। मैं बहकावे में नहीं आऊँगी पहले तुम पियो।

दिनेश ने समझाया—तू पी पहले। तू छोटी है। तुझे पहले पीना चाहिए।

मेरा हवाई जहाज गिलास से टकराया और मैं वहीं उतर गयी

रमा—पहले तुम पियो।

दिनेश—नहीं पहले तू पी।

इस विवाद में कुछ समय बीत गया। गिलास खूब शीतल हो गया। रमा ने अपने गिलास को हाथ लगाया तो उसकी उँगलियाँ गीली हो गईं। यह जो देखा तो दिनेश ने कहा—पी, जल्दी पी। देख गिलास की दीवार में होकर शरबत बाहर निकला आ रहा है। जब सब शरबत बह जायगा तो क्या पियेगी?

बात रमा की समझ में आ गई। उसने गिलास को उठाकर मुँह से लगा लिया। तभी गिलास के ऊपर से ठहाके का स्वर आया। रमा चौंकी और गिलास को नीचे रख दिया। यह कौन हँसा? दिनेश भी चकित हुआ। बोला—हाँ, यह कौन हँसा?

रमा ने फिर अपना गिलास पकड़ा। तो उसकी उँगली के नीचे से किसी के कराहने की आवाज आई—रमा जीजी, तुम तो मेरा गला दबाये दे रही हो। मेरे ऊपर दया करो, अपनी उँगलियाँ हटा लो।

रमा ने जल्दी से उँगली हटाई तो देखा कि पानी की बूँद जैसे उठकर बैठी। उसने अपने मुँह पर हाथ फेरा। तनिक नीचे को सरकी। और गिलास की दीवार से चिपककर लटक गई।

रमा ने बूँद को निहारा और बोली—जो कोई भी हो मेरे गिलास पर से हटो। मैं शरबत पियूँगी। जल्दी हटो। नहीं तो सारा शरबत रिस-रिसकर बह जायगा।

रमा की बात सुनकर वह बूँद फिर खिलखिलाकर हँस पड़ी। रमा ने डाटा—तुम क्यों हँसती हो इतनी? पानी की बूँद होकर इस प्रकार हँसते हुए तुम्हें लाज नहीं आती?

बूँद ने वहीं लटके-लटके दो कलाबाजियाँ खाईं और मुस्काकर बोली—रमा जीजी, तुम तो बहुत जल्दी रिसा गईं? दिनेश भाई ने तुम्हें बहका दिया है, भला कहीं गिलास की दीवार में होकर शरबत बाहर निकल सकता है?

दिनेश—अरी बूँद, तू रमा को क्यों बहका रही है? यदि तू गिलास में से नहीं आई तो क्या हवाई जहाज पर चढ़कर आई है?

बूँद—मैं हवाई जहाज पर ही चढ़कर आई हूँ? गिलास में से बिलकुल नहीं आई। मेरे नीचे जो दूसरी बूँद लटकी हुई है तुम उसे चखकर देख लो। तुम्हारे गिलास की बूँदें मीठी हैं और यह...

दिनेश ने वह बूँद चखी। उसमें मिठास नाम को भी न था। वह बोला—

मान लिया कि तुम गिलास में से नहीं आईं पर गिलास की दीवार पर कैसे आईं ?

बूँद—तुम्हीं ने तो ठीक-ठीक बताया है अभी। मैं हवाई जहाज पर चढ़कर आई थी। मेरा हवाई जहाज गिलास से टकराकर भाग गया और मैं गिलास की दीवार से चिपकी रह गई।

रमा—क्यों इतना झूठ बोलती हो बूँद तुम ? हवाई जहाज इस गिलास से टकराता और मुझे पता भी न चलता ? सच-सच बोलो कि तुम इस गिलास की दीवार पर कैसे आईं ? यदि तुम नहीं बोलोगी तो मैं तुम्हें पोंछकर फेंक दूँगी। बोलो !

बूँद काँपी और हाथ जोड़कर बोली—रमाजीजी, मुझ पर दया करो। मुझे बड़ी गरमी लग रही थी। तनिक शांति पाने के लिए मैं गिलास की दीवार पर आ बैठी हूँ। यह शीतल है। मुझे विश्राम मिल रहा है। इसकी शीतलता अच्छी लग रही है। तनिक मुझे बैठी रहने दो रमा जीजी ! ओहो, तुम तो रिसा गईं। न, रिसाओ मत। मैं बताती हूँ कि मैं यहाँ पर कैसे आई। मैं तुम्हारे घर में नल के मार्ग से आई। जब अम्मा ने बाल्टी नल के नीचे रखकर टोंटी खोली तो मैं नल में से बाल्टी में कूदी। मैं नल में बंद थी मानो जेल में बंद थी। नल से बाहर आई, खुली हवा लगी तो मेरे प्राण लौट आए। मैं बाल्टी में अपनी बहनों के साथ खिलखिलाई, तैरी और लहराई। अम्मा ने बाल्टी उठाई तो हमें झूले का आनन्द आया। अम्मा ने बाल्टी लाकर रसोई में रखी, रसोई कैसी-कैसी अच्छी सुगंधियों से भरी हुई थी। उसमें फुलवारी से भी अच्छी सुगंधें थीं। जी में आता था कि जीवन-भर उसी बाल्टी में बैठी रहूँ, और रसोई की सुगंध लेती रहूँ। हिलने-डुलने का नाम न लूँ।

दिनेश—तो वहीं बैठी क्यों नहीं रही ? हम क्या तुम्हें बुलाने गए थे जो यहां पधारीं।

बूँद ने नाक चढ़ाई और होंठ बिचकाये। बोली—बाल्टी पानी का घर नहीं धर्मशाला है। मैं तो चाहती हूँ कि कहीं हाथ-पैर ढीले छोड़कर पड़ी रहूँ। पर कहीं भी शांति से रह नहीं पाती। मैं उस बाल्टी में ठहरी हुई थी तो मैंने देखा कि एक चमकदार पीला-पीला गोल-गोल जीव उसमें धीरे-धीरे उतरा। मुझसे रहा न गया। जी में आई कि देखूँ यह जीव कौन है, और कैसा है ? मैं उसकी ओर दौड़ी। मैंने उसे छुआ तो वह था चिकना, बाल्टी की दीवारों से भी अधिक चिकना। मैंने उसे चारों ओर से देखना चाहा। देखना चाहा कि इस जीव का मुँह कैसा है। मैं उसके चारों ओर घूमने लगी। वह भी बाल्टी में

अधिक नीचे उतरा। मैं अपनी बहनों के कंधों पर हाथ रखकर जो उछली तो एकदम उसके मुँह के पास पहुँच गई। झाँककर जो देखा तो उसके मुँह के भीतर बहुत बड़ा गड्ढा दिखाई पड़ा। मेरे हाथ-पैर फूल गए कि कहीं इस गड्ढे में गिर न पड़ूँ, और वर्षों के लिए उसमें फँस न जाऊँ। छूट पाने को छटपटाती रहूँ? मैंने पीछे हटना चाहा, पर पीछे दूसरी बूँदें खड़ी हुई थीं और सामने की ओर धक्का दे रही थीं। मैं अकेली थी और वह अनगिनती। मैंने उस जीव के होंठ पकड़कर सँभलना चाहा, पर सफल न हुई। डगमगाई और औंधे मुँह उसके पेट में जा गिरी। नीचे था अँधेरा गुप्प। सोचा कि अब हो गई जीवन-कैद। पर शीघ्र ही मुझे ज्ञात हो गया कि उस जीव ने मुझीको नहीं खाया वरन् और भी बहुत-सी बूँदें उसका आहार बन गई हैं। और उसका पेट बूँदों से बड़ी तेजी के साथ भर रहा है। जब उसने गले तक बूँदें खा लीं तो बाल्टी से निकला और फर्श पर आ बैठा।

दिनेश—कौन-से जीव की बात कह रही है यह बूँद?

रमा—मुझे तो ऐसा लगता है कि बूँद हमारे लोटे को जानवर समझ बैठी है।

बूँद मुस्काकर बोली—अच्छा, अब पता चला कि उस जीव का नाम लोटा है। तो लोटा जी मुझे अपने पेट में डालकर फर्श पर आ बैठे। मुझे बड़ा अजब-सा लगा। मैंने सोचा था कि कैद हुई तो क्या, यह जीव इतना सुन्दर है। इधर-उधर चले-फिरेगा। खेलेगा-कूदेगा तो जरा मजा आयगा। पर वह तो भौंदू की भाँति बैठा, तो बैठा ही रह गया। चट्टान की तरह जम गया। मैं समझ गई कि यह कोई चट्टान के वंश का है। जो लुढ़क तो सकता है पर चल नहीं सकता। बैठे-बैठे मन जो ऊबा तो लोटेजी के पेट में पड़ी हुई बूँदें घबरा गईं, और उन्होंने निश्चय किया कि ऐसे तो घुट-घुटकर मर जायँगे। कुछ-न-कुछ अवश्य करना चाहिए। हमने उन बूँदों को छाँटा जिनके दाँत उस समय बहुत तेज थे। वे कदम-से-कदम मिलाती हुई लोटे के पेट की दीवार के पास पहुँचीं और सबने एक साथ किचकिचाकर उसके पेट में दाँत धँसा दिए। लोटा जी काँपे, तिलमिलाये और फर्श से उठकर उन्होंने अपना मुँह टेढ़ा कर लिया, बस मैं इस अवसर की ताक में तो थी ही। मैंने अपनी किसी बहन को धक्का दिया, किसी के कोहनी मारी, किसी के कंधों पर चढ़ी और अन्त में सबसे ऊपर की बूँद के सिर पर पैर रखती हुई बाहर की ओर कूद पड़ी मैंने सोच लिया था कि चाहे जहाँ गिरूँ, पर इन लोटेजी के पेट में अब नहीं रहना। तुम जानती हो कि मैं कहाँ गिरी?

रमा—हमें क्या पता कि तुम कहाँ गिरीं ?

बूँद—मैं, मैं गिरी रेत में। सफेद उजले रेत में। कोमल मुलायम रेत में। यह रेत वैसा नहीं था जैसा कि नदियों में होता है। यह एक विचित्र प्रकार का रेत था। यह नई जाति का रेत था। जब मैं गिरी तो यह रेत मुस्काया। उसने हाथ फैलाकर मुझे गोद में ले लिया। सच कहती हूँ मुझे तनिक भी चोट नहीं आई। मैं रेत के कनों के चारों ओर चिपक गई। मेरी दूसरी बहनें भी मेरे पीछे पीछे आईं। रेत के कन जो उनकी ओर झपटे तो आपस में गुँथ गए और उनका एक कोमल गिलगिला डिब्बा-सा बन गया।

रमा—बूँद तुम यह क्या कह रही हो हमारे घर में रेत कहाँ से आया ?

बूँद—था, वह रेत ही तो था। खूब उजला रेत था। बस जब डिब्बा बन गया तो मैं उस डिब्बे में कैद हो गई। पता नहीं कितने कन मेरे चारों ओर चिमट गए। उन्होंने कोमल दीवारों में मुझे बन्द कर लिया। मैंने सोचा अब क्या होगा ? मैंने बूँदों के देवता वरुण की विनती की। वे सदा हमारी रक्षा करते हैं। उन्होंने कहा—धीरज रखो। जहाँ हो वहीं रही आओ। छुटकारा एक-न-एक दिन अवश्य मिलेगा। कोई कारागार ऐसा नहीं है जो एक बूँद को सदा के लिए कैद रख सके। मैंने उनकी बात मानी और अपनी एक बहन से उसकी कहानी सुनने लगी। वह कहानी बड़ी मजेदार थी। कहानी समाप्त होने को ही थी कि हम और वह बिछुड़ गए। रेत के डिब्बे का एक खण्ड टूटकर अलग हो गया। मैं उस खण्ड में चली गई, और मेरी वह बहन पीछे रह गई। पता नहीं बेचारी का क्या हुआ ? उस पर कैसी बीती ?

विनेश—तुम उसकी चिंता न करो। तुम्हारे ऊपर जो बीती उसे सुनाओ।

रमा—हाँ, अपनी कहानी सुनाओ।

बूँद—मैं आपबीती ही सुनाती हूँ, रेत का वह खंड जैसे एक महा तूफ़ान में पड़ गया। वह कभी इधर से दबाया जाता, कभी उधर से दबाया जाता, उसकी हड्डी-हड्डी चटक गई और नस-नस हिल गई। उसे महा कष्ट था। वह डर के मारे कराह तक न पाता था। मैं साँस रोके उसी के भीतर सन्न पड़ी थी। पता नहीं इस तूफ़ान में उलटते-पलटते उसे कितना समय बीत गया। जब जागी तो मुझे लगा कि यह एक कठोर शिला पर बैठा हुआ है। मैंने सोचा—कैसे तूफ़ान में पड़ गए थे हम; भगवान् ने बचा लिया। अब यहाँ कुछ समय शांति से रहेंगे। पर शांति तो कभी मुझे मिलती नहीं। मुझे लगा कि एक भारी गोल शिला है जो हमारे ऊपर गिर पड़ी है। हमारा खंड उसके नीचे दब गया। वह शिला पता नहीं क्यों क्रुद्ध हो गई। हमारे खंड के ऊपर कभी इधर दौड़ती कभी उधर,

जिधर जाती हमारे रेत के खंड को दबाती चली जाती। कितनी ही बार वह मेरे सिर से छू-छू गई। मैंने बहुत दुबक-दुबककर अपने को पिस जाने से बचाया। जब वह शिला हमारे ऊपर से चली गई तो मैंने सिर उठाया। बाहर देखा तो मेरी चीख निकल गई।

रमा—क्या हो गया था?

बूँद—उस शिला ने हमारे रेत के हिस्से को फैलाकर बहुत ही पतला कर दिया था। इतना पतला कि उसमें मुझे सिर भी छिपाना कठिन हो रहा था। पर तुम जानती हो रमा जीजी, विपत अकेली नहीं आती। धरती हिली। हम इधर से उधर डगमगाये और फिर वह रेत का पतला पत्तर एक काली-काली चादर पर गिर पड़ा। यह काली चादर बहुत गरम थी। रेत के कन गरमी छूकर चिल्ला उठे। पर मुझे बड़ा आनन्द आया। मैंने खूब ही तो ताप खाया। पेट भर खाया, जब पेट भर गया तो मैंने उस पत्तर की कैद से निकलकर भागना चाहा, पर रेत के कन मुझसे भी अधिक चालाक निकले। वे दो पत्तरों में बँट गए। एक पत्तर हमारे नीचे हो गया और एक पत्तर ऊपर, हमने खूब जोर लगाया कि निकल भागें। दोनों पत्तर तन गए और फूलकर डिब्बा हो गए। उन्होंने हमें भागने न दिया। तभी एक आश्चर्य हो गया। वह डिब्बा उछला, और रमा जीजी के सामने आ गिरा।

रमा—बूँद, तुम इतना झूठ क्यों बोलती हो? मेरे सामने कौन सा डिब्बा आकर गिरा था?

बूँद खिलखिलाकर हँस पड़ी—तुम बहुत भोली हो रमा जीजी, गिरा था। जब तुम भोजन कर रही थीं।

रमा—वह तो फूली फूली रोटी थी।

बूँद—जब मैं भाप बनकर आटे में से निकल भागने का जतन करती हूँ और निकल नहीं पाती तो रोटी को फुला देती हूँ।

रमा—क्यों?

बूँद—इसलिए कि उसका पेट फट जाय और मैं निकल भागूँ।

दिनेश—जिसे तुम उजला रेत कहती हो, वह तो आटा है।

बूँद—तुम लोग उजली रेत को आटा कहते हो, डिब्बे को रोटी कहते हो। उस गोल शिला को बेलन कहते हो, और काली चादर को तवा कहते हो। जब डिब्बा रमा जीजी के सामने आ पड़ा तो रमा ने हाथ मारकर रोटी का पेट फोड़ दिया। मैं भाग निकली। तब से इसी घर में घूम रही हूँ। रमा मुझे अपने ऊपर बैठाकर घुमाती है। मैं उसी पर चढ़कर तुम्हारे गिलास तक आई। मैं

जब आई तो मेरा पेट ताप से फूला हुआ था। गिलास ने मेरा ताप ले लिया। मेरा शरीर हलका हो गया और मैं गिलास की दीवार से लटककर सुस्ताने लगी।

दिनेश—तो यह बात है?

बूँद—हाँ रमा जीजी, अब तुम अपना शरबत पी लो। नहीं तो तप जायगा। गिलास ऐसे ही रख देना। जब मैं विश्राम कर चुकूँगी तो मेरी सहेली किरन मुझे फिर ताप खिला देगी और सहेली हवा अपनी पीठ पर बैठाकर यहाँ से उड़ा ले जायगी।

४

इञ्जिन का बल

आगे इञ्जिन था और पीछे डिब्बे। इञ्जिन के निकट के डिब्बे में दिनेश और रमा बैठे थे। इञ्जिन छुक-छुक भक-भक करता था। पहिया घूमता था और गाड़ी भागी जा रही थी। आगे के पेड़ सामने आते थे और पीछे छूट जाते थे। चिड़िया चहकती रह जाती थीं। इञ्जिन ने सीटी दी और सूँ-सूँ करने लगा। रमा ने खिड़की से बाहर झाँका। बोली—दिनेश भाई, यह देखो भाप उड़ी जा रही है।

दिनेश—हाँ, बादल-जैसी भाप ही तो दिखती है।

खिड़की पर से किसी ने कहा—रमा जीजी, भाप कभी भी दिखाई नहीं देती।

दिनेश—भाप नहीं दिखाई देती तो हमें यह क्या दिखाई दे रहा है ?

किसी ने कहा—भाप जब शीतल होती है तो उसकी छोटी-छोटी पानी की बूँदें बन जाती हैं। वही दिखाई देती हैं।

दिनेश—बादल क्यों दिखाई देते हैं ?

किसी ने बताया—बादल भी बहुत छोटी-छोटी बूँदों के बने होते हैं, इस लिए दिखाई देते हैं।

दिनेश—तुम कौन बोल रहे हो ?

आवाज आई—इधर देखो इधर—यहाँ खिड़की के इस कोने में।

रमा ने देखा कि खिड़की के कोने में पानी की एक छोटी बूँद बैठी हुई है। उसकी आँखें चमक रही हैं। कान खड़े हैं। हाथों से वह पहियों की खटाखट पर ताल दे रही है। और उसका सारा शरीर मटक रहा है। बूँद ने रमा की ओर अपनी नाक उठा दी और मुस्काकर अपने चमकले दाँत दिखा दिये। उसके दाँतों का रंग बिलकुल पानी-जैसा था। रमा ने कहा—तुम तो बूँद हो बूँद। पानी की बूँद।

भाप ने ताप उगला, पानी बनी और खिड़की में बैठ गयी।

बूँद—तभी तो मैं जानती हूँ कि जब मैं भाप बन जाती हूँ तो किसी को दिखाई नहीं देती।

दिनेश—यह तो रेल गाड़ी है। तुम यहाँ कैसे आ बैठी हो? क्या तुमने टिकट खरीदा है?

बूँद—मैं, और टिकट खरीदूँगी? क्या तुम नहीं जानते कि रेलगाड़ी को मैं ही चलाती हूँ।

रमा—हमने सुना तो है, पर हमें विश्वास नहीं होता। इतनी बड़ी रेलगाड़ी को तुम-जैसी पानी की बूँद कैसे चला सकती है?

बूँद चिढ़ गई और बोली—मैं चलाती हूँ, मैं चलाती हूँ।

रमा—कैसे चलाती हो?

बूँद—खेल-खेल में चलाती हूँ।

दिनेश—यदि तुम गाड़ी खेल-खेल में चलाती हो, तो हमसे किराया क्यों लिया जाता है?

बूँद—मैं सच कहती हूँ दिनेश कि मैं गाड़ी मुफ्त में चलाती हूँ। एक पैसा भी गाड़ी चलाने के लिए नहीं लेती। तुम किराया इसलिए देते हो कि पटरी बिछाने, और इञ्जिन, डिब्बे, स्टेशन बनवाने में रुपया खर्च होता है। नौकरों को वेतन दिया जाता है।

रमा—तुम यहाँ क्यों आ बैठी हो?

बूँद—मैं खेल खेल में इञ्जिन से चिल्लाती हुई निकली तो हवा मुझे अपनी पीठ पर बैठाकर भागी। मुझे रेल में घूमना बहुत अच्छा लगता है। हवा अपने पंख फड़फड़ाती हुई इस खिड़की के निकट से जा रही थी। मैंने अवसर देखा। अपने पेट का ताप हवा की पीठ पर छोड़ दिया और बूँद का रूप धरकर इस खिड़की पर कूद पड़ी।

रमा—बूँद बीबी, जब हम तुम साथ ही यात्रा कर रहे हैं तो हमें कोई कहानी सुनाओ जो समय कटे।

दिनेश—हमें यह सुनाओ कि तुम इञ्जिन में कैसे पहुँची? और उसमें तुमने क्या-क्या खेल खेले?

बूँद मुस्काई। उसने गर्व से छाती फुलाई। भागते पेड़ पर बैठे लंगूर की ओर देखा और बोली—मैं अपनी कथा सुनाने में कभी सकुचाती नहीं। लो सुनो—मैं बादल से एक खेत में उतरी। भूखी थी इसलिए पेट भर मिट्टी खाई। फिर अपने भाई-बहनों के साथ नाचती-गाती यमुना नदी में आ गई। तुम जानते हो कि यमुना नदी हमारी समुद्र यात्रा का एक मार्ग है।

दिनेश—यह हमें मालूम है।

बूँद—मैं जब यमुना में पहुँची तो उछलने-कूदने और दौड़ने-भागने से बहुत थक गई थी। मैंने सोचा कि कोई घोड़ा मिले तो उस पर बैठकर चलूँ। मैंने इधर-उधर देखा। बूँद पर बूँद उमड़ी आ रही थीं। सभी थकी हुई थीं। हाँफ रही थीं और दौड़ी जा रही थीं। मैं सामने की ओर देख रही थी कि मेरी पीठ पर एक बहुत जोर का धक्का लगा। मैं बेहोश होकर गिरने लगी पर सँभल गई। क्रोध आया तो पीछे की ओर देखा। पाया कि एक लकड़ी का टुकड़ा है, जिसने मेरे टक्कर मारी है। मैंने उसकी गरदन पकड़ ली और उछलकर उसकी पीठ पर चढ़ बैठी। उसने अपनी पीठ बहुत हिलाई, बहुत ही पलटियाँ खाईं, पर मैंने उस पर पैर कस दिए और दाँत उसकी पीठ में धँसा दिए। उस पर बैठकर मैं शान से आगे बढ़ने लगी। दूसरी बूँदें मुझे देखकर जलने लगीं। मैं कई दिन उस पर बैठी-बैठी चलती रही। बैठी रहती तो चलती रहती; लेटी रहती तो चलती रहती; और सोती रहती तो चलती रहती।

रमा—वह लकड़ी का टुकड़ा तुम्हारी रेलगाड़ी बन गया।

बूँद—हाँ। पर मैंने कभी किसी को किराया नहीं दिया। मैं अपने काठ के घोड़े पर बैठी-बैठी एक दिन ऐसे स्थान पर पहुँची जहाँ नदी के तट पर वृक्ष नहीं थे। सफेद-सफेद, लाल-लाल, भूरी-भूरी चट्टानें थीं यह चट्टानें टेढ़ी-मेढ़ी नहीं थीं। इनके किनारे एकदम सीधे थे। मैं चकित हुई और उनको भली भाँति देख लेने के लिए तट की ओर अपने घोड़े का मुँह फेर दिया। मैंने उन चट्टानों को निकट से देखा तो भी मेरी समझ में कुछ न आया। तब मैंने अपनी सहेली हवा से पूछा : इन चट्टानों का नाम क्या है?

रमा—क्या नाम बताया हवा ने?

बूँद—हवा ने मेरे सिर पर एक चपत लगाया और बोली—यह न पर्वत हैं और न मामूली चट्टानें हैं। यह एक नगर है जिसमें मनुष्य रहते हैं। यह चट्टानें भीतर से खोखली हैं। इन गुफाओं को मनुष्य घर कहते हैं। इतना जो सुना तो मैंने ध्यान से इन घरों की ओर देखा और दूर दूर तक दृष्टि दौड़ाई। देखी एक ऐसी जगह, जहाँ धुआँ निकल रहा है। झट मैं समझ गई कि वहाँ आग लगी है। आग से ताप होता है। ताप मेरा प्यारा भोजन है। उस धुएँ की ओर मैंने अपना काठ का घोड़ा दौड़ा दिया। घोड़ा सरपट दौड़ता हुआ उसके निकट पहुँचा। यह धुआँ नदी के तट के पास ही निकल रहा था। मैं घोड़े को वहीं [illegible] निकालने लगी और अपनी पीठ पर लादी होकर धुएँ का भेद लेने का यतन करने लगी। मैंने देखा कि मेरी ओर पीठ किये हुए एक गोल, काली, लम्बी

और भारी चट्टान बैठी हुई है। उसका एक पैर बहुत ही लम्बा है। ऐसा लम्बा कि मानो बादल में छू गया हो। उसमें से धुआँ निकल रहा है। उसकी साँस जोर-जोर से चल रही है। उसकी छाती से धक-धक का सुर निकल रहा है। उस चट्टान को देखकर मैं डर गई। मुझे लगा कि यह एक बहुत बलवान दानव है। मैंने उसके निकट से भागना चाहा, पर विवश हो गई। उस दानव की शक्ति ने मेरे घोड़े को तट की ओर खींच लिया। मैंने घोड़े पर से कूदकर भागना चाहा पर घबरा गई, और उससे और भी अधिक चिपट गई।

रमा—फिर क्या हुआ ?

दिनेश—क्या वह दानव तुमको खा गया ?

रमा—उस दानव का नाम क्या है ?

बूँद—सुनो सुनो ! तुम नगर में रहते हो, और वह दानव भी नदी-तट पर नगर में ही रहता है। तुम उसे नहीं पहचानते, तो मैं अभी नहीं बताऊँगी। मैं अभी यही सुनाऊँगी कि मुझ बेचारी के ऊपर क्या बीती ! मैं घोड़ा दौड़ाती किनारे के निकट एक कुण्ड में पहुँची। मैंने देखा कि वहाँ चट्टान-दानव की पूँछ के समान मोटी एक काली वस्तु पानी में लटकी हुई है। मैंने सोचा, कि यदि यह चट्टान दानव की पूँछ नहीं है, तो उसका दूसरा पैर होगा। मैं सोच ही रही थी कि मेरी एक बहन बोली—न यह पूँछ है, न यह पैर। यह उस दानव की सूँड है। वह इससे पानी भर-भरकर अपने पेट में पहुँचाता है।

रमा—वह था क्या ?

बूँद—मैं अभी नहीं बताऊँगी। मैंने पाया कि लाखों बूँदें दानव की उस सूँड की ओर खिंची चली आ रही हैं। ऐसा जादू का जोर उस दानव के पास है। उस कुण्ड में बूँदों की बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी हो रही थी। धक्कम-धक्का होने लगी। बूँदें एक दूसरे के ऊपर गिरने लगीं। सब बूँदें यही चाहती थीं कि इस दानव की सूँड में घुसकर देखें कि भीतर से यह कैसी है ? उस समय मेरा घोड़े पर सवार होना सबको बुरा लगा। एक बोली—ऐसी भीड़ में भी कोई कठघोड़े पर चढ़ा करता है। आईं बड़ी घुड़सवार बनकर, नीचे उतरिये।

दिनेश—तब तुमने क्या किया ?

बूँद—मैं बोली ही नहीं। चुपचाप घोड़े पर बैठी रही। तिक तिक करती रही। घोड़ा दूसरी बूँदों के सिरों पर टाप रखता हुआ आगे बढ़ता रहा। इस प्रकार मैं शीघ्र ही सूँड के मुँह के निकट पहुँच गई। सूँड का मुँह पानी में डूबा हुआ था। मैंने चाहा कि मेरा कठघोड़ा डुबकी लगाकर मुझे उसके मुँह तक ले चले। पर डुबकी लगाते ही घोड़े का साँस फूलने लगता था और वह जल्दी से फिर

ऊपर तैर आता था। मेरा धीरज छूट गया। और मैं उसकी पीठ पर से कूद पड़ी। डुबकी लगाई और दूसरी बूँदों के बीच सिकुड़ती-सिमटती सूँड के मुँह पर जा पहुँची। देखा, वहाँ बूँदों की भीड़ लगी हुई है। मैं भी उस भीड़ में अपने स्थान पर खड़ी हो गई। जब आगे की बूँदें सूँड़ में चढ़ गईं तो मेरी बारी आई। मैंने बहुत हुलसकर सूँड में पैर रखा, सोचा था कि अब एक बढ़िया तमाशा देखने को मिलेगा। पर जानते हो मुझे वहाँ क्या मिला?

रमा—क्या मिला?

बूँद—कुछ भी नहीं। मेरे चारों ओर थीं बूँदें, आगे बूँदें, पीछे बूँदें, अगल में बूँद, बगल में बूँद। मैंने बूँदों को हटाया और सूँड की दीवार परखने को आगे बढ़ी। यह दीवार, बता सकते हो किसकी बनी हुई थी?

दिनेश—हमें क्या पता? हम तो कभी उस सूँड में गये नहीं।

बूँद—वह दीवार लोहे की दीवार थी। दीवार छूते ही मेरा जी धक से रह गया। एक बूँद बोली—सखियो, यह चट्टान दानव की सूँड नहीं है। यह तो लोहे का नल है। हम सब क़ैद हो गए हैं। दूसरी ने यह सुना तो वह रो पड़ी। बोली—हे भगवान् अब पता नहीं हमें क्या भुगतना पड़ेगा। मैंने उसे धीरज बँधाया—घबराती क्यों हो? जो कुछ पड़ेगी हम सहन करेंगे। बूँद होकर साहस कभी नहीं छोड़ना चाहिए। बूँदों ने मेरी बात मान ली और बड़े जोर से महात्मा वरुण का जयकारा बोला। वह हमारा जयकारा इतना बलशाली था कि उससे नल की दीवारें तक हिल गईं।

रमा—दानव के पेट में तुम कब पहुँचीं?

बूँद—दानव का पेट तो हमें मिला ही नहीं। सच बात तो यह है कि वह दानव था ही नहीं। वह था नदी से पानी खींचने का इञ्जिन। हम समझ गए कि हम सब धोखा खा गए हैं। पर अब कुछ नहीं हो सकता था। हम पहले नल में ऊपर चढ़े, कई मील तक सीधे बहे, और फिर ऊपर चढ़ने लगे। कुछ ऊपर पहुँचने पर हमने सुना कि आगे की बूँदें खिलखिलाकर हँस रही हैं। उनकी हँसी सुनकर हमारे मुरझाये मन खिल उठे और हमारे डग भी जल्दी-जल्दी उठने लगे। मैं नल के जीने से ऊपर पहुँची तो देखा कि एक बहुत बड़ा कमरा हमारे लिए तैयार है। हमसे पहले आई हुई बूँदें उसमें विश्राम कर रही हैं। मैं भी खिलखिलाकर हँसी और उस कमरे में लेटी बूँदों के ऊपर कूद पड़ी। एक कोने में पहुँची और वहाँ सिर टेककर और पैर फैलाकर पड़ रही। जब मैं सो रही थी तो जो मिट्टी मैंने खाई थी वह चुपके से मेरे पेट से निकल गई और जाकर कमरे के फर्श पर बैठ गई। मैंने भी उसे फिर छूना उचित नहीं समझा।

दिनेश—क्यों ?

बूँद—इसलिए कि मेरे पेट उछलने-कूदने और ऊधम मचाने में कठिनाई होती है।

रमा—तुमने इस कमरे में कब तक विश्राम किया ?

बूँद—मैं वहाँ अधिक विश्राम नहीं कर पाई। मेरी कुछ साथिनों ने उसमें से निकलने का द्वार खोज लिया। इस द्वार से उतरने को एक जीना लगा हुआ था। मैं भी घूमती-फिरती उसी द्वार पर आ गई। बूँदें उस जीने में पाँत बनाये खड़ी हुई थीं। मैंने पूछा—आप लोग आगे क्यों नहीं बढ़तीं। एक बूँद ने समझाया कि सबसे बाहर का जो द्वार है वह बंद है। जब खुलेगा तो हम आगे बढ़ सकेंगे। मैंने पूछा—वह कब खुलेगा ? एक बूँद मेरे निकट ही बोली—यह मुझसे पूछो। मैंने कहा—आप ही बताइए। वह बोली—मैं कई बार इस कमरे में आ चुकी हूँ। मनुष्य इस कमरे को टंकी कहता है। मैंने पूछा—यह तो ठीक है। पर यह बताओ कि इस जीने का बाहर का द्वार कब खुलेगा ? वह बोली—जब कोई प्यासा इञ्जिन उस द्वार के निकट आकर खड़ा होगा तभी वह द्वार खुलेगा। उसने इञ्जिन का नाम लिया ही था कि हमारे सामने की बूँदें आगे को सरकीं। वह मेरा हाथ पकड़कर बोली—वह देखो द्वार खुल गया है। तुम इञ्जिन से घबराना मत बहुत-सी बूँदें डरती हैं। इधर-उधर भागती हैं और कभी-कभी बड़ी मुसीबत में फंस जाती हैं। तुम ऐसा न करना। सीधी उसके मुँह में चली जाना। मैं तुमसे वहीं मिलूँगी। इतना कहकर वह चंचल बूँद आगे की बूँदों के सिरों पर पैर रखती और भी आगे बढ़ गई। मैं दूसरी बूँदों के पीछे-पीछे द्वार की ओर चलने लगी।

रमा—फिर क्या हुआ ?

बूँद—पहले मैं उस जीने से नीचे उतरी, फिर एक लोहे की सुरंग में होकर आगे बढ़ी। कुछ दूर जाने के बाद हमें फिर ऊपर को चढ़ना पड़ा। यह ऊपर जाने का मार्ग ऊँट की गरदन की भाँति टेढ़ा था।

दिनेश—अच्छा तो तुम उस नल में पहुँच गईं जिससे इञ्जिन पानी पीता है ?

बूँद—हाँ, उस [illegible] मे एक बिना पेंदी की बाल्टी लटकी रहती है। मैं ऊँट के [illegible] की दीवार से टकराई और इञ्जिन के मुँह की ओर लपकी। जानते हो इञ्जिन के पानी पीने का मुँह कहाँ होता है ?

रमा — कहाँ होता है।

बूँद —अधिकतर इञ्जिनों में यह मुँह इञ्जिन की पीठ पर होता है। और कुछ इञ्जिनों में बगल में भी होता है। मैं जिस इञ्जिन के मुँह में कूदी वह एक बड़ा इञ्जिन है। इञ्जिन के मुँह के द्वार पर मुझे मेरी पुरानी साथिन मिल गई। उसने मेरा हाथ पकड़ा और मुँह के भीतर ले गई।

दिनेश—अच्छा ?

बूँद—इञ्जिन में हमारे खेल का स्थान उसका मुँह नहीं है। हमारे खेल का स्थान है उसका पेट। मुँह से पेट में जाने का एक ही मार्ग है। उस पर पहले से ही बूँदें खड़ी हुई थीं। हमें उसी पाँत में ठहरना पड़ा। हम धीरे-धीरे आगे बढ़ते जाते थे। ज्यों-ज्यों इञ्जिन के पेट के निकट पहुँचते थे अधिकाधिक ताप मिलता जाता था और हम उसे पकड़-पकड़ कर अपने पेट में डालते जाते थे। मेरे पेट में ताप रखने के लिए पाँच थैले हैं। पहले थैले में ३७३ कौर ताप समाता है। दूसरे में ८० कौर, तीसरे में १०० कौर, चौथे में ५३६ कौर और पाँचवें में तो बहुत-सा ताप समा सकता है। जब मैं बूँद के रूप में होती हूँ तो पहले और दूसरे थैले ताप से भरे हुए होते हैं। और तीसरे थैले में भी कुछ ताप होता है। इस समय मैंने ताप को पकड़-पकड़कर तीसरा थैला भरना आरम्भ कर दिया। ताप मिलता जाता था और मैं उसे पेट में डालती जाती थी धीरे-धीरे मेरे पेट का तीसरा थैला भी भर गया। अब मैं इञ्जिन के पेट में थी। इसे बायलर कहते हैं। यह रेल के इञ्जिन का सबसे मोटा दीखने वाला भाग है। इसमें पानी भरा होता है और बीच में लोहे की बहुत-सी नालियाँ पड़ी होती हैं। आग की लपटें इन नालियों में होकर दौड़ती हैं। बूँदें ताप खाती हैं और आनन्द से मगन होकर नाचती हैं।

रमा —तीसरा थैला भर गया तो तुमने क्या किया ?

बूँद—तब मैंने चौथे थैले में ताप भरना आरम्भ किया। उसे भरा और अच्छी तरह भरा। जब चौथा थैला मुँहामुँह भर गया तो मैं भाप बन गई। और पाँचवें थैले में भी ताप डालना आरम्भ कर दिया। ताप से पेट भरकर हमने इञ्जिन के पेट में खूब ऊधम मचाया। यदि वह लोहे का न होता तो फक [illegible] फट जाता। हम इतना ऊधम मचाती हैं कि इस लोहे के बायलर को भी फाड़ सकती हैं। पर इस [illegible] के कई मुँह होते हैं। एक मुँह से ताप [illegible] लगती है, दूसरे से यह सीटी बजाती है और तीसरा मुँह इसलिए होता है कि भाप का अधिक ऊधम मचाने लगे तो उसे खोलकर बाहर निकाल दिया जाय। जब हमारा ऊधम बहुत बढ़ जाता है तो पेट का यह तीसरा मुँह अपने-आप

खुल जाता है और हम परस्पर एक दूसरे को धक्का देते हुए बाहर निकल पड़ते हैं।

दिनेश—तुमको अभी किस मुँह से निकाला गया है?

बूँद—मैं चाहती तो थी कि पहिया घुमाती हुई बाहर निकलूँ। मैं उस ओर पैर बढ़ा ही रही थी कि एक भैंस पटरी पर आ गई। और इंजिन का सीटी वाला मुँह खुल गया। मैं दौड़ी और किलकारी मारती हुई उसमें से निकल पड़ी। हवा ने मुझे देखा तो लपककर अपनी पीठ पर बैठा लिया। मैं आराम में पड़ गई। हवा ने मुझे फुसलाकर मेरे पाँचवें थैले का सब ताप ले लिया। और फिर चुपके-चुपके उसने चौथे थैले को भी खाली कर दिया। चौथा थैला खाली होते ही मैं भाप से बूँद बन गई। मैंने तीसरे थैले में २०-२२ कौर रखकर शेष सब ताप उसे दे डाला।

रमा—पाँचवें और चौथे थैले का ताप देकर तुम पानी बनीं।

बूँद—हाँ, और तीसरे थैले में से ७८-८० कौर ताप देकर मैं ठंडी हुई, जब मैं भाप होती हूँ तो किसी को दिखाई नहीं देती। इञ्जिन के पेट में बूँदें ताप खा-खाकर अदृश्य हो जाती हैं और एक दूसरे को पकड़ने के लिए दौड़ती हैं। एक धमा-चौकड़ी मच जाती है। हमारा यही ऊधम है। इसी से बायलर की लोहे की दीवारें भी थर-थर काँपती हैं।

दिनेश—तुम इस गाड़ी में कहाँ तक चलोगी हमारे साथ?

बूँद—जहाँ तक तुम चलने दोगे।

रमा—हम तुमसे कुछ नहीं कहेंगे बूँद बीबी! जहाँ तक तुम्हारी इच्छा हो वहाँ तक चलो।

बूँद—धन्यवाद।

५

कुहरे से पाला

जाड़ा बहुत पड़ रहा था। लोग थर-थर काँप रहे थे। रजाई के नीचे भी ठंड घुसी जा रही थी, मानो वह भी अपने को उढ़ावन में गरमाना चाहती हो। अचानक दिनेश और रमा की आँखें खुल गईं। उन्होंने सुना कि आज की रात पाला पड़ा है। फसल मारी गई है।

रमा—क्यों दिनेश, यह पाला क्या होता है ?

दिनेश—मुझे तो पता नहीं। चलो उठो। खेत में पड़ा है, देख आयँ।

रमा—चलो।

जब वे बिस्तर पर से उठे तो पता चला कि रात बीत चुकी है। दिन निकल आया है। उनको चुपचाप उठकर सरदी में जाते देखा तो माँ ने कहा—इस ठण्ड में कहाँ जाते हो ? तुम दोनों बहुत शैतान हो गए हो। चलो घर में बैठो।

रमा—माँ क्या कह रही हैं दिनेश ?

दिनेश—मुझे तो सरदी के मारे कुछ सुनाई नहीं देता।

रमा—मेरा भी यही हाल है। मुझे भी ठंड के मारे कुछ सुनाई नहीं देता।

दिनेश—तो माँ कुछ भी नहीं कह रही हैं। आओ।

दोनों घर से बाहर निकले तो ठिठक गए, दिन निकल आया था पर सब जगह धुआँ भरा हुआ था। अँधेरा-अँधेरा-सा था। दिखाई कुछ नहीं देता था।

रमा—यह इतनी आग किसने जलाई, जो गाँव भर में धुआँ-ही-धुआँ भर दिया ?

दिनेश—उसे इतना ईंधन कहाँ से मिला ?

रमा—क्यों बे धुएँ, तू कहाँ से आया ?

दिनेश—यह धुआँ तो बोलता ही नहीं।

रमा—गूँगा होगा बेचारा।

मैं पाला हूँ, पाला

दिनेश—सचमुच गूँगा ही है।

तभी अचानक उन्होंने अपने कान के पास भन-भन का सुर सुना।

रमा—यह मक्खियाँ कहाँ भनभना रही हैं?

दिनेश—भन-भन तो मुझे भी सुनाई पड़ रही है पर मक्खियाँ दिखाई नहीं देतीं।

अब उन्होंने एक हँसी सुनी। यह हँसी भीनी-भीनी थी। और चारों ओर से आ रही थी। वे चकित हो गए। चलते-चलते रुक गए। धुआँ घुमड़-कर घना हो गया।

एक ओर से किसी ने पूछा—बच्चो, तुम कहाँ जा रहे हो और किसे खोज रहे हो?

रमा—हम खेत में जा रहे हैं, और पाले से मिलना चाहते हैं। तुम कौन हो जो छत पर से बोल रहे हो?

आवाज ने कहा—मैं पीपल का पेड़ बोल रहा हूँ। इधर आओ। मेरे निकट कई पत्तों पर पाला पड़ा हुआ है। बेचारा बहुत दुखी है। कहता है कि कई वर्ष बाद तो मैं इस गाँव में आया, पर अभी तक एक जने ने भी मेरी बात नहीं पूछी? कोई मुझे देखने तक नहीं आया?

रमा—पीपल के पेड़, तुम पाले से कह दो कि हम आ रहे हैं। हम उसे अच्छी तरह देखेंगे। आओ दिनेश!

दिनेश और रमा पीपल के पेड़ के नीचे पाले को खोजने लगे। पेड़ के नीचे उनको कोई न मिला। उससे कुछ दूर हटे तो देखा कि कुछ पत्तों पर आटे-जैसी सफेद-सफेद वस्तु पड़ी हुई है।

पत्तों की ओर से आवाज आई—इधर आओ, रमा जीजी इधर!

दूसरा सुर आया—अजी इधर, दिनेश भाई इधर!

दोनों उस सफेद आटे के निकट गये और उन्होंने एक पत्ता आटे सहित उठा लिया।

रमा—अरे आटे भाई, तुमको पीस-पीसकर यहाँ ठण्ड में किसने फेंक दिया है?

पत्ते के ऊपर वह सफेद चूरन हिला। उसने पैर फैलाये। हाथ उठाये और आँख निकालकर हँसा: हा हा हा हा!

रमा डर गई। उसने पत्ते को पीपल की जड़ पर धर दिया। पाले ने आँखें मलीं और पत्ते पर उठकर बैठ गया। हँसकर बोला—रमा जीजी, तुम डर गईं। मैं पाला हूँ पाला, आटा नहीं! मुझे किसी ने पीसकर यहाँ नहीं फेंका! मैं

तो ऊपर से अपने-आप उतरा हूँ।

रमा—तुम आटे-जैसे सफेद-सफेद पाले हो ?

पाला—हाँ, मेरा रंग सफेद है। मैं पाला हूँ। मेरा नाम तुषार भी है।

रमा—ऊपर से तुम कहाँ से आये हो ? और इस पत्ते पर क्यों बैठे हो ?

पाला—तुम पूछती हो कि मैं कहाँ से आया ? मैं तो तुम्हारे ही घर से आया हूँ रमा जीजी !

दिनेश—हमारे घर से आये हो ? तुम इतना झूठ क्यों बोलते हो ?

रमा—हमारे घर में तुम कहाँ थे ? हमने तो तुमको देखा नहीं।

पाला—मैं कल दोपहर को तुम्हारे घर में था। मैं तनिक भी झूठ नहीं बोलता। जो बात कह रहा हूँ, वह एकदम सच है। कल तुम्हारे दादा ने जब कुएँ पर धोती धोई तो मैं कुएँ से निकलकर धोती से चिपक गया। तुम्हारे दादा ने धोती को ऐंठ-ऐंठकर मुझे निकाल देने का बहुत जतन किया। मैं भी बहुत चतुर हूँ। मैंने हाथों से सिर को छिपाया आँखें बन्द कीं, और धोती के तागों के बीच में छिपकर ऐसा बैठ गया कि टस से मस न हुआ। जब तुम्हारे दादा सारा जोर लगाकर हार गए तो वे चिढ़ गए। उन्होंने धोती बड़े जोर से घुमाकर कंधे पर दे मारी, धोती वहीं लटकती रह गई। मैंने चुपके से सिर निकाल कर जो देखा तो पाया कि दादा घर को जा रहे हैं, और मैं उनकी पीठ पर सवारी कर रहा हूँ।

रमा—इतने शैतान हो तुम ! मैं दादा से कहकर तुमको पिटवा दूँगी।

पाला—तुम्हारे दादा बहुत अच्छे आदमी हैं। वे मुझे सवारी खिलाते-खिलाते घर ले गए। मुझसे क्रोधित तो वे थे ही, आँगन में पहुँचकर बड़े झटके के साथ उन्होंने मुझे नीचे पटक दिया। धोती धरती पर गिरती तो मेरे हाथ-पैर टूटे बिना न रहते, पर भगवान् ने कुशल कर दी। वहाँ एक खाट बिछी थी धोती उसी खाट पर कूद पड़ी। वह घबरा गई थी अतः बहुत देर तक थर-थर काँपती रही। मेरा मन अभी शांत नहीं हुआ था कि तुम्हारे दादा का क्रोध फिर भड़क उठा। उन्होंने धोती को उठाया और उसकी ऐंठन खोल डाली, फिर बड़े जोर से फटकारना आरम्भ किया। मैंने भी वरुण देवता का नाम लिया और अपने दाँतों से, हाथ-पैरों के नखों से तागों को पकड़कर लटक गई। जब वे फटकारते थे, तो मुझे ऐसा लगता था कि अब गिरी, अब गिरी। पर गिरी नहीं। लटक-लटककर, झूल-झूलकर रह गई।

दिनेश—बस-बस, पाले अब तुम रहने दो। हम इससे अधिक झूठी बातें अब नहीं सुनेंगे।

रमा—पाला कहीं धोती से चिपटा करता है ?

दिनेश—रमा, यह पाला, झूठ बोलता है। इसे दंड देना चाहिए, तोड़-मरोड़कर फेंक देना चाहिए।

पाले ने हाथ जोड़कर विनती की—मुझे तोड़ो-मरोड़ो नहीं। मैं अपने भेद की बात तुम्हें बताऊँगा।

रमा ने डाटा—जल्दी बताओ।

पाले ने छाती फुलाकर गरदन मटकाई। मैं, जो इस समय पाला बना हुआ हूँ, सचमुच पानी की बूँद हूँ। कुएँ पर तुम्हारे दादा ने जब धोती पर पानी डाला था तो मैं धोती से चिपक गई थी।

दिनेश—अच्छा तो तुम पानी की बूँद हो जो पाला बन जाती हो ? बड़ी शैतान हो तुम। फसलों का नाश कर देती हो।

पाला—मैं जान-बूझकर फसलों का नाश नहीं करती। मैं इस समय आफत की मारी हुई हूँ। तुम देख रही हो कि मैं हिल-डुल भी नहीं सकती। लँगड़े-लूले की भाँति इस पत्ते पर पड़ी हुई हूँ।

रमा—ओह, ऐसी बात है, हाँ तो फिर क्या हुआ ?

पाला—दादा ने धोती धूप में फैला दी। तुम जानते हो कि धूप में किरन होती है। और किरन मेरी सहेली है। उसने जो मुझे धोती के तागों में लटकते और काँपते हुए देखा तो वह दौड़कर मेरे पास आई तथा मुझे गोद में उठा लिया। मुझे सहलाती हुई बोली—अरी बूँद, तू भूखी होगी। कुछ खायगी ? मैंने उत्तर देने के लिए जो मुँह खोला तो उसने जल्दी से एक कौर ताप मेरे मुँह में डाल दिया। *तुम जानते ही हो कि ताप मेरी जान है। जिस प्रकार दिनेश को खीर* अच्छी लगती है और रमा को लड्डू, उसी प्रकार मुझे ताप अच्छा लगता है। बस मैं ताप खाती-खाती आनन्द में मगन हो गई।

दिनेश—हमने सुना है कि बूँद के पेट में ताप रखने के लिए कई थैले होते हैं, तुमने ताप को किस थैले में डाला ?

पाला—तुम जब मेरे पेट का भेद जानते ही हो तो मैं कुछ छिपाऊँगी नहीं। जब मैं धोती में से लटकी हुई थी तो मेरे पेट का पहला थैला एकदम भरा हुआ था। दूसरा भी पूरा भरा था। तीसरे में कोई अठारह कौर ताप था, मैं अभी इस थैले में बयासी कौर ताप और डाल सकती थी। पर...

रमा—मैंने अभी उसमें दो तीन कौर ही ताप डाले थे कि किरन ने मेरा पेट इस प्रकार दबाया कि तीसरे थैले का मुँह बन्द हो गया। और ताप चौथे थैले में जाने लगा। किरन ताप-पर-ताप खिलाती गई और चौथा थैला

फूलता चला गया। यह चौथा थैला मेरा छू-मंतर है। जब वह भर जाता है तो मेरे शरीर में चिनमिनी-सी लगने लगती है। मैं पानी नहीं रह पाती। पानी की वाष्प बन जाती हूँ।

दिनेश—वाष्प कि भाप?

पाला—जब मैं भाप बनती हूँ तो तीसरा और चौथा दोनों थैले ताप से भरे रहते हैं। पर जब वाष्प बनती हूँ तो तीसरा थैला पूरा भरा नहीं होता। हाँ, गैस रूप बनने के लिए मेरे चौथे थैले का ताप से भरा होना अत्यन्त आवश्यक है।

रमा—तो यह बात है? चौथा थैला ताप से भर जाय तो तुम गैस, और वह खाली हो जाय तो तुम पानी की बूँद।

पाला—हाँ तुमने ठीक समझा। तो किरन ने मुझे ताप खिलाना आरम्भ किया। चौथा थैला ज्यों-ज्यों भरता जाता था, त्यों-त्यों मेरा शरीर फूलता जाता था और मैं बेचैन होती जाती थी। मैं धीरे-धीरे बेसुध हो गई। मुझे पता नहीं कि क्या हुआ? किरन ने मेरे साथ क्या किया? जब मुझे होश आया तो मैंने पाया कि मैं हवा की पीठ पर बैठी हुई हूँ। किरन मेरे चिकोटी काट-काटकर खिलखिलाती है और भाग जाती है। जब मैं किरन को पकड़ने के लिए हाथ फैलाती थी तो शैतान हवा मुझे किरन से दूर हटा ले जाती थी। और मैं मन-ही-मन छटपटा कर रह जाती थी।

रमा— तो हवा और किरन दोनों ने मिलकर तुमको बहुत तंग किया है?

पाला—कुछ न पूछो। मैं बहुत दुखी हो गई।

रमा—तो तुम हवा की पीठ पर से कूद क्यों नहीं पड़ीं?

पाला—तुम समझती हो कि मैं कूदी नहीं? कूदी और बार-बार कूदी। नीचे कूदी, ऊपर कूदी, अगल-बगल में कूदी पर उससे कोई लाभ नहीं हुआ।

दिनेश—क्यों? तुमने लम्बी छलाँग नहीं लगाई होगी?

पाला—मैं तो बहुत लम्बी छलाँग लगा सकती हूँ और मैंने लगाई भी। पर हवा तो मेरे चारों ओर थी। मैं जिधर भी कूदती थी हवा की ही पीठ पर गिरती थी और जितना मैं इधर-उधर उछलती थी उतना ही वह मुझे उछालती थी। उसके इस ऊधम से मेरी हड्डी-पसली चटकने लगी थीं। जब बहुत हाथ-पैर मारने पर भी कुछ बस न चला तो मैं और क्या करती? मैं थक गई और आँखें बन्द करके लेट गई। अब हवा और किरन मुझे कितना ही दुखी करतीं पर मैं उनकी ओर तनिक भी ध्यान न देती। मैं बहुत देर तक सोती रही पर जब सोते-सोते भी थक गई तो जाग उठी।

रमा—जागकर क्या देखा ?

पाला—मैंने पाया कि मैं धरती से काफी ऊँची पहुँच गई हूँ। किरन का कहीं पता नहीं है। नीचे अँधेरा है। ऊपर अँधेरा है।

रमा—रात हो गई थी।

पाला—आकाश में जो हंडा लटकता है और प्रकाश देता है वह बुझ गया था। तुम जानते हो कि अँधेरे में चोर निकलते हैं पर मेरा चोरों से नहीं डाकुओं से पाला पड़ा।

दिनेश—यह डाकू कहाँ से पहुँच जाते हैं हवा में ?

पाला—हवा में डाकू कहीं बाहर से नहीं आते। हवा भी ताप खाती है। जो हवा भूखी होती है वह अपने दल बना लेती है। वह ताप को अपने-आप तो पकड़ नहीं सकती। वाष्प से लूट लेने के लिए इधर-उधर घूमती है। ज्यों-ज्यों अँधेरा बढ़ता जाता है इन दलों के धावे भयानक होते जाते हैं। जब एक दल ने मेरे ऊपर आक्रमण किया तो मैंने सिर झुकाकर आँखें मूँद लीं। हवा के उस भूखे दल से मैं बच गई। पर उसके बाद एक दूसरा दल तुरत ही मेरे ऊपर टूट पड़ा। मैं न सिर झुका पाई, न आँख मूँद पाई, और न इधर-उधर भाग ही पाई। मैं घिर गई। उस दल ने मुझे चारों ओर से घेर लिया और बड़ी निर्दयता के साथ वह मेरे पेटसे ताप लूटने लगा। कोई हवा मेरी पीठको दबाती, कोई मुह में हाथ डालती, कोई पेट में घूँसा मारती। मैं पिटते-पिटते बेहाल हो गई। मेरे चौथे थैले का सब ताप हवा खा गई। चौथा थैला खाली होते ही मैं पानी की नन्हीं-सी बूँद बन गई और धरती की ओर गिरने लगी। मैंने सोचा कि बस अब हाथ-पैर बचने वाले नहीं हैं।

दिनेश—तो तुम्हारे बहुत चोट आई ?

पाला—मैं गिरी नहीं बाल-बाल बच गई। धरती के निकट मैं पहुँची ही थी कि एक धूल का कन मुझे हवा में तैरता दिखाई पड़ गया। उसी पर पैर टेककर मैं ठहर गई। और भी बहुत-सी बूँदों ने इस प्रकार इन कनों पर पैरे टेक-टेककर अपने को बचाया। इन कनों पर पैर रखकर तैरने वाली बूँदें तब धुन्ध कहलाने लगीं।

रमा—धुन्ध ?

दिनेश—कोहरा ?

रमा—जो यह धुआँ-सा दिखाई दे रहा है ?

पाला—हाँ रमा जीजी ! यह हवा की डकैती की मारी छोटी-छोटी पानी की बूँदें हैं जो धूल के कनों पर पैर रखकर ठहरी हुई हैं।

दिनेश—तुम पाला कैसे बने ?

पाला—ऐसा मालूम होता है कि आज इस गाँव में कुछ बहुत भूखे हवा के दल आ गए हैं। जब मैं धूल के कन पर बैठी-बैठी तैर रही थी तो एक बहुत भूखे दल ने मेरे ऊपर धावा बोल दिया। मैं चिल्लाई—मेरा पेट तो पहले ही से खाली है। मुझे न लूटो। पर उन डाकुओं ने एक न सुनी। उन्होंने पहले मेरी तीसरी थैली का सब ताप निकाला फिर दूसरी थैली में भी अपनी उँगलियाँ पहुँचा दीं। मेरी दूसरी थैली में ८० कौर ताप होता है। वह दल मेरा यह सब ताप लूट ले गया। दूसरी थैली खाली होते ही मेरा शरीर सुन्न हो गया हिलने डुलने की शक्ति जाती रही और मैं पंगु होकर इस पत्ते पर गिर पड़ा।

दिनेश—अच्छा तो तुम पानी की बूँद हो। तुमको हवा के डाकुओं ने लूट-लूटकर पाला बना दिया है।

पाला—हाँ दिनेश भाई, तुम लोग हवा से तो कुछ कहते नहीं, फसल के लिए मुझ बेचारे पाले को बदनाम करते हो।

रमा—नहीं। अब हम तुमसे कुछ नहीं कहेंगे। अब तुम आराम से लेट जाओ।

पाला ठठाकर हँस पड़ा। वह उठकर खड़ा हो गया। बोला—वह किरन आ रही है। अब मैं ताप खाऊँगा। दूसरी थैली भरकर पानी बनूँगा, तीसरी थैली में कुछ कौर डालकर इधर-उधर टहलूँगा, और फिर चौथी थैली भरकर अपने पंख फैला दूँगा। शैतान हवा की पीठ पर बैठूँगा और उन रंग-बिरंगे बादलों की ओर उड़ जाऊँगा।

६

बिजली की कड़क

हवा चल रही थी। बादल गरज रहे थे। घटा उमड़ी आ रही थी। दिनेश और रमा सायबान में बैठे हुए थे। वे आकाश की ओर देख रहे थे कि बड़ी-बड़ी बूँदें टपा-टप पड़ने लगीं।

रमा—दिनेश, पानी बरस रहा है।

इसी समय एक ओर से पतली आवाज आई—"देखती नहीं। अंधी हो क्या ? इतनी जोर से धक्का मारा है कि मेरे अंजर-पंजर ढीले कर दिए।"

उसी प्रकार की एक दूसरी आवाज ने उत्तर दिया—"बीबीजी, भाग सराहो कि तुम किसी मोटर-तांगे के नीचे नहीं आईं, नहीं तो हड्डी-पसली चूर-चूर हो गई होती। कुशल समझो कि बूँद से ही टकराई हो। हवा में जब सैर किया करो तो आँख खोलकर चला करो। नहीं तो किसी दिन·······"

पहली आवाज तेज हुई—"बस तुम अपनी सीख रहने दो। देख-भालकर आप नहीं चलतीं और उपदेश मुझे देती हो। तुमने मेरा सारा ताप छलका दिया, अब मैं तुमको खा जाऊँ तो·······?"

दूसरा सुर हँसा और बोला—"ओहो, तुम मुझे खा जाओगी। इतना साहस है तुम्हारा। जरा आगे आओ। देखो तुम मुझे खाती हो कि मैं तुम्हें। लगी हो बढ़-बढ़कर बातें बनाने। इतनी दुबली-पतली तो बनी हो, और बातें सिंह-जैसी करती हो। अरी मुझे देख, मुझे। सीधी आकाश से उतरी चली आ रही हूँ। मैंने बड़ों-बड़ों के दाँत खट्टे कर दिए हैं। तू तो, है किस खेत की मूली।

पहली आवाज ने ललकारा—"बस, अधिक शेखी न बघारो। आकाश से नीचे फेंक दी गई हो और·······"

दूसरा सुर चिल्लाया—"तो आ जा !"

पहला सुर बोला—"आ जा !"

रमा और दिनेश ने देखा कि एक छोटी बूँद है और एक बड़ी। दोनों

बूँदों ने लड़ना बंद कर दिया।

की आँखें क्रोध से लाल हैं। नथुने फड़क रहे हैं। और दोनों घूँसा ताने एक दूसरे को घूर रही हैं।

रमा ने डाँटा—तुम आपस में लड़ती क्यों हो? अलग अलग बैठो।

छोटी बूँद बोली—इस मोटी भम्बो ने मेरे टक्कर मारी है।

बड़ी बूँद ने कहा—रमा जीजी, इस मुकटैली से कहो कि मेरी आँखों के सामने से हट जाय। नहीं तो मैं इसके कम-से-कम दो टक्कर और मारूँगी।

दिनेश ने डाटा—चुप रहो, लड़ो मत। हाँ मोटी, तुम बताओ कि तुमने इसके टक्कर क्यों मारी?

बड़ी बूँद—मैं आकाश से आ रही थी।

रमा—झूठ बोलती हो। आकाश में तुमको कौन ले गया? क्या आकाश में रेलगाड़ी चलती है? सच-सच बताओ क्या बात है?

बड़ी बूँद ने ओठ बिचकाये, गरदन मटकाई और फिर हाथ जोड़कर बोली—रमा जीजी, क्रुद्ध मत होओ। मैं अपनी पूरी कथा तुमको सुनाती हूँ। उसे सुनकर तुम जान लोगी कि मैं एकदम निरपराध हूँ। और सारा अपराध इस मुकटैली देवी का है।

रमा—हाँ अपनी कथा सुनाना चाहती हो? सुनाओ, जल्दी सुनाओ।

दोनों बूँदें अलग-अलग आसन मारकर बैठ गईं। बड़ी बूँद ने छोटी बूँद को लाल-लाल नेत्रों से देखा और बोली—सागर के ऊपर मैं अपनी बहनों के साथ खेल रही थी। हवा आती और हमारे बाल बिखराकर चली जाती। हम खिलखिला उठते एक बार हम बड़ी तेजी से दौड़ रहे थे कि सामने से हवा बड़े वेग से नाचती और फुङ्कारती हुई आई। उसकी फूँक जो मेरे लगी तो मुझे तन-बदन की सुध न रही। मेरा माँस फूल गया और मुझे लगा कि मेरा शरीर बहुत हलका होगया है। मैंने होश में आने के लिए बार-बार अपने चिकोटी काटी। जब मैं चेतन हुई तो मालूम हुआ कि सागर नीचे छूट गया है और मैं अकेली, एकदम अकेली, हवा में बहुत ऊपर तैर रही हूँ। मैंने नीचे अपने भाई-बहनों की पुकार सुनी और चाहा कि दौड़कर फिर उसके खेल में घुल-मिल जाऊँ। पर जब मैं नीचे कूदने का जतन करती तभी हवा मुझे फूँक मारकर ऊपर उड़ा देती।

रमा—तो तुम बिना पानी की बाष्प बने ही ऊपर तैरती रहीं।

बड़ी बूँद—हाँ, हवा पानी की बहुत नन्हीं-नन्हीं बूँदों को ऊपर उड़ा ले जाती है। उनको गेंद की भाँति इधर-उधर उछालती है, और नीचे उतरने नहीं देती।

दिनेश—जब हवा ने तुमको नीचे नहीं उतरने दिया तो क्या हुआ ?

बड़ी बूँद—सखी किरन ने मेरी सहायता की। जब मैं हवा की शैतानियों से घबरा रही थी तो वह चुपके से मेरे पास आई। बोली—तू चिन्ता न कर। तुझे कष्ट इसलिए हो रहा है कि तेरा शरीर भारी है और पेट खाली है। मैंने किरन से कहा : तो करो सखी, शीघ्र कोई उपाय करो। मैं बड़ी विपदा में हूँ। किरन मुस्काई, उसने कहा—मुँह खोलो। मैंने मुँह खोल दिया तो उसने एक हाथ से मेरे मुँह में ताप के कौर डालने आरम्भ किए और दूसरे हाथ से मेरे पेट में से नमक निकालने लगी।

रमा ने पूछा—नमक ? नमक तुम्हारे पेट में कहाँ से आया ?

बड़ी बूँद हँसकर बोली—अरी, तुम इतना भी नहीं जानतीं !

रमा—हमें क्या पता कि तुम कहाँ-कहाँ और क्या-क्या खाती फिरती हो ?

बड़ी बूँद—तुमको नहीं पता तो सुनो। जैसे तुम भूखी नहीं रह सकतीं उसी प्रकार मैं भी खाली पेट नहीं रह सकती। जब मैं सागर में होती हूँ तो नमक से ही अपना पेट भरती हूँ। सागर में सभी बूँदें नमक खाती हैं।

दिनेश—यह बात है ? तो किरन तुम्हारे पेट में ताप डालती गई और नमक निकालती गई।

[बड़]ी बूँद—हाँ वह मुझे ताप खिलाती गई, खिलाती गई। जब ५३६ कौर खिला चुकी तो मेरे पेट का चौथा थैला भर गया, यह थैला भरा तो शरीर फूला और वह पहले से कोई १७०० गुना बड़ा हो गया। वह हल्का भी फूल-सा हो गया। हवा के थपेड़ों से अब मुझे तनिक भी चोट नहीं लगती थी। मैं अब उछल कर हवा की पीठ पर लेट गई और उसे थपथपाने लगी। तिकतिकाने लगी। मैंने एड़ लगाकर उसे भगाया। वह मुझे लेकर ऊपर और भी ऊपर उठती चली गई। मैंने उससे कह दिया—ले चलो। जहाँ तुम्हारी इच्छा हो वहाँ मुझे ले चलो।

रमा—तो वह तुमको कहाँ ले गई ?

[बड़]ी बूँद—वह मुझे लेकर फुह्कारी और उड़ चली। जब हम बहुत ऊँचे पर पहुँच गए तो वायु का एक भूखा दल हमारे ऊपर टूट पड़ा। मैंने और मेरे साथियों ने इधर-उधर सिर छिपाना चाहा। पर एक न चली। वायु के उस लुटेरे दल ने हमारे पेट की चौथी थैली में हाथ डालकर सारा ताप निकाल ही तो लिया।

और तुम फिर बन गईं पानी—दिनेश ने कहा ।

हाँ । मैं ही नहीं लाखों-करोड़ों लघु-लघु बूँदें पानी बनकर ऊँचे आकाश में तैरने लगीं । तैरते-तैरते यह बूँदें घुमड़ने लगीं और इकट्ठी होने लगीं । बूँदों के बड़े-बड़े दल बन गए । हम हवा को चिढ़ाने लगे और हवा हमें जोर लगाकर उड़ाने लगी । जब हम इधर-से-उधर जाते तो बड़ा शोर मचाते थे । सारे आकाश को अपनी गरज से भर देते थे। हमारी गरज सुनकर वन में मोर बोलने लगते और बालकों की टोली नाच-नाचकर गा उठती थी : 'पानी दे–पानी दे । बादल बादल पानी दे ।'

रमा—तो तुम बादल बन गई थीं ।

बड़ी बूँद—हवा में तैरता हुआ बूँदों का दल बादल कहलाता है ।

रमा—पर बादल तो बूँद नहीं पानी की बाष्प होती है।

बड़ी बूँद ने बताया—पानी की बाष्प दिखाई नहीं देती, बादल दिखाई देता है । बादल बहुत छोटी-छोटी पानी की बूँदों का झुण्ड होता है । तो हम बादल बन गए और हवा की पीठ पर चढ़कर इधर-से-उधर घूमने लगे । घूम रहे थे कि एक दूसरा बादल सामने आ निकला । हमने डाटा—हटो मार्ग से । पर वह हटा नहीं, अड़कर खड़ा हो गया । हमने उसे ललकारा—वहाँ क्यों खड़े हो, हिम्मत हो तो आगे आओ, हाथ मिलाओ । उस बादल ने भी ललकारा कि तुम ही आगे आओ न ? हम दोनों बहुत देर तक एक दूसरे को ललकारते रहे । जब खूब जोश आ गया तो हमसे रहा नहीं गया, हमने अपना हाथ आगे बढ़ा दिया । दूसरे बादल ने आव देखा न ताव; इतने जोर से हाथ पर हाथ दे मारा कि दोनों की टक्कर से चिनगारियाँ निकलने लगीं । इतनी जोर का चटाका हुआ कि और तो और हम लोग भी काँप उठे । चिनगारियों की कौंध से हमारी आँखें भी बन्द हो गईं । हवा के शरीर में जो वह चिनगारियाँ लगीं तो वह झुलसकर चिल्ला उठी और थरथर काँपने लगी ।

दिनेश ने पूछा—तुम बिजली की बात तो नहीं कह रही हो ?

बड़ी बूँद—बादलों के आपस में हाथ मिलाने से जो चिनगारियाँ झड़ती हैं तुम लोग उनको बिजली कहते हो । हम उस बादल से हाथ मिलाकर आगे बढ़े ही थे कि एक दूसरे बादल ने आकर हमारे कंधा मारा और अड़ंगी लगा दी । हम जो डगमगाये तो हमारा दूसरा हाथ पृथ्वी की ओर लटक गया । पृथ्वी ने हमें पकड़ लेने को जल्दी से जो हाथ ऊपर उठाया तो वह हमारे हाथ से टकरा गया । उससे एक बड़ी चिनगारी झड़ी और तड़तड़ाहट की आवाज हुई । वह चिनगारी एक बहुत बड़े बरगद के पेड़ से छू गई । चिनगारी छूते

ही वह पेड़ थर्राने लगा, कांपा, चीखा और तब हमने देखा कि उस पेड़ की एक शाखा फटकर बायें को गिर पड़ी है और दूसरी दायें को। बीच में एक ठूंठ खड़ा रह गया है। टहनियों की हड्डियां चटखने लगीं और पत्तियों के शरीर झुलस उठे। उनकी करुण कराह से आकाश भर गया और हम लोग फिर ऊंचे उठ गए।

दिनेश—तो तुमने पेड़ के ऊपर बिजली गिरा दी। ठहरो, अब मैं तुमको बताता हूं। लाना रमा मेरा चाकू, मैं इस बूंद के नाक-कान काटूंगा।

बड़ी बूंद घबराई और उठकर खड़ी हो गई। उसने दोनों हाथों से अपना मुंह ढक लिया। बोली—मैं तुमको अपने नाक-कान नहीं काटने दूंगी।

दिनेश—मैं काटूंगा, काटूंगा। तुम पेड़ों पर बिजली क्यों गिराती फिरती हो?

बड़ी बूंद—मत काटो दिनेश!

दिनेश—काटूंगा, काटूंगा।

बड़ी बूंद ने अपने सिर को आटे की भांति मसल डाला, थपथपाया और बोली—लो, काटो मेरी नाक। देखूं कैसे काटते हो। काटो न?

तब दिनेश और रमा ने देखा कि बूंद का सिर एकदम गोल-मटोल हो गया है। उसने अपने नाक-कान सिर के भीतर छुपा लिए हैं। वे दिखाई ही नहीं पड़ते। बूंद का यह करतब देखकर दोनों बहुत चकित हुए।

बूंद ने कहा—काटो न दिनेश?

दिनेश बोला—बूंद बीबी, तुम तो अपने-आप ही नकटी-बूची हो गई हो। मैं अपने चाकू को क्यों कष्ट दूं?

बड़ी बूंद ठठाकर हँस पड़ी। बोली—तुम मेरे नाक-कान काट ही नहीं सकते। पर मैं तुमको बता देना चाहती हूं कि मैं पेड़ों पर बिजलियां नहीं गिराती। मैं तो तनिक सी हूँ। कर ही क्या सकती हूं। जब करोड़ों-अरबों बूंदें इकट्ठी हो जाती हैं तभी हम ऐसा बड़ा उधम मचा पाती हैं। पेड़ को गिराने की हमारे जी में नहीं होती। हम तो यह चाहते हैं कि वह भागे। हम देखना चाहती हैं कि पेड़ भागेगा तो कैसा लगेगा। पर यह पेड़ इतने बुद्धू होते हैं कि भागते तो हैं नहीं, चिल्लाते हैं और टूटकर गिर पड़ते हैं।

छोटी बूंद बोली—तुम यह बताओ कि तुमने मुझे……

बड़ी बूंद ने कहा—तुम चुप नहीं रहोगी। मैंने यह बड़ी भूल की कि

तुमको खा नहीं डाला। खा डालती तो पाप ही कट जाता। झगड़ा ही मिट जाता।

रमा ने कहा—लड़ो मत। हाँ बड़ी बूँद तुम धरती पर कैसे आईं ?

बड़ी बूँद—पेड़ को गिरता देखा तो मुझे न जाने क्यों डर लग आया। मैं अपने निकट की बूँद से चिपट गई। हम दोनों चिपटी-चिपटी बहुत देर तक काँपती रहीं। अचानक मुझे मालूम हुआ कि वह बूँद मेरे मुँह में होकर मेरे पेट में पहुँच गई है। मैं उसे खा गई हूँ। मुझे वह अच्छी लगी। मैं एक दूसरी बूँद को पकड़ने के लिए लपकी। वह मुझसे बचने के लिए इधर-उधर चक्कर काटने लगी। यह छोटी बूँदें बहुत मूरख होती हैं। उसने मेरा मुँह खुला देख लिया। बस मुझसे बचने के लिए मेरे मुँह में घुस गई और हो गई हज़म।

रमा—तुम बड़ी शैतान हो। बूँद होकर बूँद को खा जाती हो।

बड़ी बूँद—रमा जीजी, भूख में किवाड़ भी पापड़ होते हैं। पर मैं जिस बूँद को खाती हूँ उसका कुछ नहीं बिगड़ता। वह तो आराम से मेरे पेट में लेटी रहती है। तो हाँ, जब मैं कई बूँदें खा चुकी तो मैं भारी हो गई। हवा को बोझ लगने लगा। उसने मुझे अपनी पीठ पर से गिरा दिया। मैं कोई चिड़िया तो थी ही नहीं, जो पंखों के बल से उड़ जाती। मैं घबराई और पैर टेकने को धरती की ओर दौड़ निकली। मैं दौड़ती आती थी और मार्ग में जो छोटी-छोटी बूँदें मिलती थीं उनको खाती आती थी। मेरे पेट में पहुँच जाने के बाद उन बूँदों को किसी प्रकार का डर नहीं रह जाता था। मैं दौड़ी आ रही थी कि मेरे मार्ग में आ गई यह सुकटैली बूँद। टक्कर लग गई तो मैं क्या करूँ ?

छोटी बूँद ने खड़ी होकर कहा—टक्कर लगी तो लगी। पर तुमने मेरे पेट के चौथे थैले में से ताप क्यों निकाल लिया। मैं यह डकैती नहीं चलने दूँगी।

बड़ी बूँद ने समझाया—बूँद रानी, तुम्हारा ताप तो हवा ने लूटा और तुम क्रोध मुझ पर करती हो। बूँदें जब एक दूसरे से ताप लेती हैं तो आपस में बाँट लेती हैं। ऐसा नहीं होता कि एक बूँद का पेट भर जाय और दूसरी का खाली रह जाय।

छोटी बूँद—यह तो मैं भी जानती हूँ।

रमा—हाँ छोटी बूँद अब तुम क्या कहती हो ?

छोटी बूँद खिलखिलाई। उसने बड़ी बूँद के हाथ में हाथ डाल दिया और फिर दोनों रमा और दिनेश की ओर मुँह बिचकाकर फर्श पर बह गईं। पानी जोर से बरसने लगा।

: ७ :

धरती काँपी

दिनेश और रमा ने देखा कि पानी जोर से बरस रहा है। आँगन में छोटे-छोटे तालाब बन गए हैं। बूँदें पानी पर गिरती हैं, छोटे-बड़े बुल्ले बन जाते हैं। इधर-उधर तैरते हैं, ठुमकते हैं और फूट जाते हैं। वे बूँदों का गिरना और पानी का उछलना बड़े ध्यान से देख रहे थे। रमा ने देखा कि एक बड़ी बूँद चौखट पर गिरी है और उसके मुँह में से एक छोटी बूँद उछल पड़ी है। रमा देखती रही कि वह बूँद कहाँ जाती है ? और क्या करती है ? उसने देखा कि वह बूँद हवा में लहराई, झूमी, और फिर धीरे से निकट ही रखी तश्तरी पर उतर आई। रमा ने देखा कि वह तश्तरी पर बैठी ही नहीं, आराम से लेट भी गई।

रमा ने वह तश्तरी उठाकर अपने निकट रख ली।

दिनेश—इस तश्तरी का क्या करोगी रमा ?

रमा—यह बूँद, जो इस तश्तरी पर लेटी है, उस बड़ी बूँद के मुँह में से निकलकर भागी है।

दिनेश ने तश्तरी पर लेटी हुई उस बूँद को ध्यान से देखा। वह उस समय हाथ पैर फैलाये बे-खबर सो रही थी। रमा ने फूँक मारकर उसे जगा दिया। बूँद ने करवट बदली, आँख मली और जँभाई लेते हुए उठकर बैठगई। बोली—तुम दोनों कौन हो ? मैं कहाँ हूँ ? और तुम मुझसे क्या चाहते हो ?

रमा ने कहा—इनका नाम दिनेश है और मेरा नाम रमा है। तुम हमारे घर में हमारी तश्तरी पर बैठी हुई हो। मैंने तुमको उस बूँद के मुँह में से निकलकर भागते हुए देखा है। हम तुम्हारी कहानी सुनना चाहते हैं।

बूँद बोली—मेरी कहानी। वह बूँद ? वह बूँद बड़ी भयानक थी। उसने मुझे सँभलने का अवसर भी न दिया। रहने दूँ उस बात को अभी। हाँ तो तुम
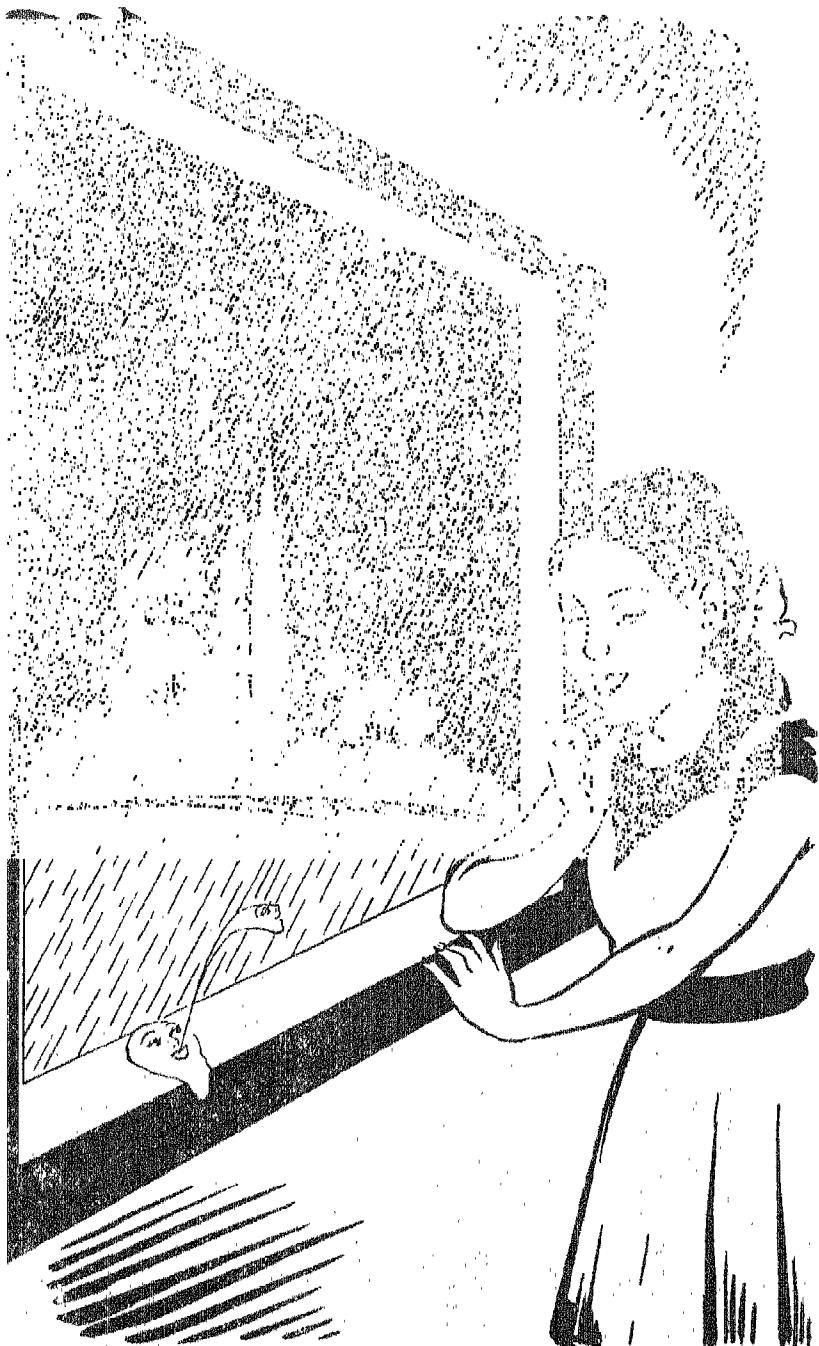
एक बड़ी बूँद···और उसके मुँह में से एक छोटी बूँद उछल पड़ी

मेरी कहानी सुनना चाहते हो। तुमने मुझे तश्तरी पर शांति से ठहरने का अवसर दिया और उस बूँद से बचाया। मै तुम्हें कहानी अवश्य सुनाऊँगी। लो सुनो। अपने मुँह अच्छी तरह खोल लो।

दिनेश—बूँद बीबी, हम लोग मनुष्य हैं। मुँह से नहीं कान से सुनते हैं। हम चाहें या न चाहें हमारे कान सुनने को सदा खुले रहते हैं।

बूँद—तो सुनो। मैं आने कहाँ-कहाँ घूमती-घूमती सागर में पहुँची। वह कहानी बहुत पुरानी कहानी है मैं उसे तुम्हें नहीं सुनाऊँगी। जब मैं बड़ी दौड़-भाग के बाद सागर में पहुँची तो मैं बहुत थक गई थी। जितना विश्राम चाहती थी उतना भोजन भी चाहती थी। मैं जानती थी कि सागर में एक ही भोजन अक्सर मिलता है और वह है नमक। पर तुम जानते हो कि भूखे को रूखा क्या। भूख तो वह दशा है जब किवाड़ भी पापड़ होते हैं। मैंने सोचा कि नमक मिले तो नमक ही सही। कुछ-न-कुछ पेट में तो पड़ेगा। तो भई, मैं जब सागर में पहुँची तो कितनी ही बूँदें आकर मुझसे चिपट गईं। उन्होंने मेरे मुँह से मुँह मिला दिया। मैं घबरा गई कि यह क्या आफ़त आई। मैं छटपटाने लगी और भागने का जतन करने लगी।

तब एक बूँद ने कहा—यह तो तुमको खाना ही होगा। वरुण के कुल की रीति ही ऐसी है कि जो कुछ खायँगे मिल बाँटकर खायेंगे। यह नहीं हो सकता कि एक बूँद के पेट में अधिक नमक हो और दूसरी पड़ोसिन के पेट में कम। उन्होंने मुझे बरबस नमक खिलाकर मेरा पेट उतना ही भर दिया जितना कि उन सबका भरा था।

पेट भर गया तो मैंने सोचा कि अब विश्राम करना चाहिए? मैंने एक बूँद को अड़ंगी लगाकर गिराते हुए पूछा—बीबी जी, यह तो बताओ कि तुम्हारे इस सागर के ऊपर रहूँगी, तो मुझे कभी विश्राम नहीं मिलेगा। वहाँ हवा और किरनें बूँदों को भी चैन से नहीं बैठने देतीं। यदि मुझे विश्राम करना है तो मुझे सागर की तली में उतरना होगा। मेरी समझ में उसकी बात आ गई और मैंने सागर में डुबकी लगानी आरम्भ की। तुम जानते हो कि सागर बहुत गहरा है। मैं डूबती ही चली गई, डूबती ही चली गई। कई महीने तक डुबकी लगाने के बाद मैं सागर की तली में पहुँची।

रमा ने पूछा—कैसी थी सागर की तली?

बूँद—सागर की तली कोई अच्छी जगह नहीं है। पर आराम पाने के लिए वही एक जगह थी। इस तली में चिपचिपी कीचड़ भरी है। गहरे

समुद्र में रहने वाले मरे जीवों के शरीर उसमें सड़ते रहते हैं। उनसे हवा के बबूले निकलते रहते हैं और इस तली पर सदा ऊपर से पत्थरों की वर्षा होती रहती है।

दिनेश—सागर में पत्थरों की वर्षा कैसी?

बूँद—सागर में शंख और सीपी-जैसे जीव बहुत रहते हैं। इनके शरीर पर पत्थर-जैसा कठोर और भारी खोल होता है। यह जीव जब मर जाते हैं तो इनके निर्जीव खोल सागर की तली में बैठ जाते हैं। मैंने अपने को इनकी मार से बचाया तो देखा कि समुद्र में एक काला-काला बड़ा दानव लेटा हुआ है। मैंने चारों ओर घूमकर उसे देखा। उसका शरीर लोहे का बना हुआ था।

दिनेश—लोहे का?

बूँद—हाँ लोहे का। उस दानव का शरीर एकदम लोहे का था, बूँदों ने मुझे बताया कि एक बार सागर की छाती पर न जाने कहाँ से ऐसे बहुत से दानव आ गए। वे लेटे-लेटे चलते थे। उनकी छाती से धुआँ निकलता था, और वे धड़ाक-धड़ाक चिल्लाते थे। उन्हीं में से एक दानव मर-कर नीचे आ गिरा है।

दिनेश—तो तुम युद्ध में डूबे हुए पानी के जहाज की बात कर रही हो?

बूँद—तुमने ठीक बताया। उस दानव का नाम जहाज ही था। मैं उससे बहुत डरी। बचती-बचती एक शंख की छाया में जाकर लेट गई। कहने को तो उस चार मील गहरी तली में घोर अँधेरा था। पर दीपकों के मारे नींद नहीं आती थी। वे दीपक सड़क के किनारे के दीपकों की भाँति एक जगह पर खड़े होकर नहीं जलते थे। वे विचित्र दीपक थे। जलते हुए जिधर मन में आता उधर घूमते रहते थे।

रमा—सागर की तली में दीपक। इतने गहरे पानी में वे बुझ क्यों नहीं जाते थे?

बूँद—उनमें चाहे जितनी फूँक मारो, चाहे जितना उन पर पानी डालो वे बुझते ही न थे।

दिनेश—क्यों?

बूँद—वे साधारण दीपक नहीं थे, वे चमकने वाली मछलियाँ थीं। वे जब तक जीती हैं, चमकती रहती हैं। मरती हैं तभी बुझती हैं।

रमा—तो तुम आराम से वहाँ भी न सो पाईं।

बूँद—सोना तो रहा बहुत दूर। मैं एक [illegible] में फँस गई। मैं थी एकदम नीचे और मेरे ऊपर बूँद-पर-बूँद चार मील मोटी चिनी हुई थी। जब तक मैं

थकी हुई थी उनका बोझ मुझे अच्छा लग रहा था। पर जब थकन मिट गई तो इतना भारी बोझ सँभालना मेरे लिए महा कठिन हो गया। मुझे लगा कि मैं उस भार के नीचे पिस जाऊँगी। मैं हाँफने लगी। मेरा दम घुटने लगा। लगा कि बिना यहाँ से भागे बचना कठिन है। मैंने उस कीचड़ में सिर छिपा लेना चाहा पर चैन वहाँ भी न मिला। बूँदों का बोझ वहाँ भी मेरे सिर पर बना ही रहा। मैंने साहस बटोरा। निश्चय किया कि अँधेरी सुरंगों में होकर मुझे अब आगे बढ़ना होगा। मैंने नाक-मुँह बन्द किए और हाथों से टटोलकर कीचड़ में घुसना आरंभ कर दिया। मैं उतरती गई, गहरे मेंउतरती गई। बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ आईं पर मैंने उनकी तनिक भी चिन्ता न की। मुझे लग रहा था कि थोड़ा परिश्रम और करूँ तो इस कठिनाई के बाहर निकल जाऊँगी। जब आशा इतनी अधिक थी तभी मैंने अनुभव किया कि मेरे सामने सुरंग का द्वार बन्द हो गया है।

दिनेश—सुरंग का द्वार कैसे बंद हुआ? किसने बंद किया?

बूँद—बात यह हुई कि मैं ऐसी जगह पर पहुँच गई जहाँ कीचड़ समाप्त हो गई थी। नीचे एक चट्टान थी जो मेरे सिर से टकरा रही थी।

रमा—तुम्हारा सिर फूटा नहीं?

बूँद—वरुण देवता का वरदान ही ऐसा है कि हम चाहे कितने ही ऊँचे से गिरें, चाहे कितने ही दबें, चाहे कितने ही पिसें, कैसी ही चोट खायें, हमारा कुछ नहीं बिगड़ता। चट्टान मेरे सिर से अड़ी और मैं उस पर डटकर बैठ गई।

रमा—तुम उस चट्टान पर कितनी देर तक बैठी रहीं।

बूँद—जब मैं किसी काम को करने का निश्चय कर लेती हूँ तो समय का लेखा-जोखा भूल जाती हूँ। मैं काम का ही विचार रखती हूँ और काम को पूरा करके छोड़ती हूँ। मैं वहाँ पड़ी रही, पर चट्टान में जाने का मार्ग बराबर खोजती रही। मैंने देखा कि एक बूँद को चट्टान के गुप्त मार्ग का पता है। वह उसमें प्रवेश कररही है। मैं लपकी और जल्दी से हाथ बढ़ाकर उसका पैर पकड़ लिया। वह आगे बढ़ी तो मैं भी उसके साथ घिसटती चली गई। चट्टान के भीतर का यह मार्ग सड़क नहीं थी, सुरंग थी। यह सुरंग बाल से भी पतली थी और उसकी लम्बाई, वह कुछ मत पूछो। हम महीनों नहीं बरसों चलते गए, पर उस सुरंग का अन्त ही न आया। और नई विपदा यह पड़ी कि जो नमक हमने सागर में खाया था वह भी हमारे पेट से निकल गया। मुझे पता नहीं बरसों तक मैं उस बूँद का पैर पकड़े घिसटती चली गई। राम-राम करके हमने वह चट्टान पार की तो अपने को एक गुफा में पाया। इस गुफा में अँधेरा घुप था। टटोलते-टटोलते हम एक चिकने पत्थर के पास पहुँचे और उस पर आराम से लेट गए। बहुत बरस बाद

ऐसे आराम का अवसर मुझे मिला।

हमारे पीछे-पीछे और भी बहुत-सी बूँदें उस तहखाने में उतरी चली आ रही थीं। भीड़ अधिक होगई तो मैंने वहाँ से खिसकने की सोची। मैं लेटे-लेटे थक भी गई थी। मैंने उस अँधेरी गुफा में टटोलना आरंभ किया। और भी बहुत सी बूँदें इस काममें लगी हुई थीं। मुझे इसमें अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ा। मैं टटोलते-टटोलते एक ऐसी सुरंग में पहुँची जहाँ पहले कोई दूसरी बूँद नहीं गई थी। मैंने इस बात पर बड़ा गर्व अनुभव किया तथा और भी अधिक उत्साह के साथ आगे बढ़ने लगी। यह सुरंग इतनी सँकरी थी कि मैं पीछे फिरकर भीनहीं देख सकती थी। पर आहट सुनने से मालूम होता था कि बहुत-सी बूँदें हैं, जो मेरे पीछे आ रही हैं। मैंने छाती फुलाई। मैं सबकी नेता जो थी। मैं गर्व से झूमकर आगे सरक रही थी। शरीर पत्थरों से छिला जा रहा था फिर भी बड़ा मजा आ रहा था। एकाएक मैं चौंक उठी और सरकते-सरकते रुक गई। मुझे यह पता न था कि मैं नीचे जा रही हूँ या ऊपर जा रही हूँ! सागर के निकट जा रही हूँ या सागर से दूर जा रही हूँ। मैं काँपी। मैंने अनुभव किया कि मेरी सुरंग बड़े वेग से काँप उठी है। मुझे अपने ऊपर विश्वास नहीं हुआ। पर सुरंग फिर काँपी और उसके नीचे से बड़े जोर का शोर सुनाई दिया।

रमा—कैसा शोर?

दिनेश—जैसे कि बहुत से बालक आपस में लड़ रहे हों?

बूँद—नहीं। ऐसा शोर, जैसे कि रेल के लाखों इञ्जन एक दूसरे को धक्का देते हुए भाग रहे हों। उस शोर को सुनकर मैं डर गई। मैंने आँख मूँदकर दाँतों से सुरंग की दीवारों को पकड़ लिया। पर सुरंग की दीवार तो स्वयं डरके मारे थरथरा रही थी। दीवार जितनी ही काँपती थी उतनी ही जोरसे मैं पकड़ने का यत्न करती थी। धीरे-धीरे दीवार का कम्पन बढ़ने लगा, और शोर भी तेज हो चला। चट्टान इस प्रकार काँपी जैसे कि तूफान में जहाज काँपता है। वह घबरा रही थी। कभी उठकर बैठती थी और कभी लेट जाती थी। कभी खड़े होने का जतन करती थी कभी और धम से गिर पड़ती थी। चट्टान ही नहीं मैं भी बेहद घबराई हुई थी। समझ में नहीं आता था कि हो क्या गया। क्या सचमुच प्रलय होने वाली है?

रमा—हुँ?

बूँद—इसी समय अचानक मेरी आँखें बन्द हो गईं। बड़े जोर का धक्का लगा। शरीर छूट पड़ गया। एक बहुत बड़ा धड़ाका हुआ। वह चट्टान धरती के भीतर मीलों गहरी थी। वह गेंद की भाँति ऊपर उछली और धरती की

छाती फोड़कर आकाश में मीलों ऊँची चली गई। उस चट्टान के कन-कन बिखर गए, और सुरंग के भी। मेरे चारों ओर गंधक का धुआँ था। चट्टानों का रेत था। नीचे धरती के एक छेद में से लाल-लाल पिघला हुआ पत्थर उबल-कर बह रहा था।

दिनेश—तुम्हारी जोखिम की कहानी मैं समझ गया बूँद! तुम एक फटते हुए ज्वालामुखी के मार्ग में पड़ गई थीं। यह तो भगवान् ने कुशल कर दी कि तुम जीवित बच गईं, नहीं तो अंजर-पंजर सब उड़ जाते।

रमा—बाल-बाल बचीं।

बूँद—मैंने तुरत वरुण देवता को प्रणाम किया। तभी एक ओर से झोंका आया और हवा के एक दल ने मुझे चारों ओर से घेर लिया। मैं घबराई। यह नई बला आई। अब मैं क्या करूँगी? मेरी घबराहट देखी तो हवा का वह दल खिलखिलाकर हँस पड़ा। जैसे होली के दिन मित्रों को पकड़कर उनके रंग मला जाता है उसी प्रकार एक ने मुझे पकड़ लिया और सब ने मेरे मुँह में ताप डालना आरंभ किया। उस दल ने मेरे पेट को ताप से ठसाठस भर दिया और फिर खिलखिलाता दूसरी ओर भाग गया।

रमा—तुम यह बताओ कि यहाँ इतनी दूर कैसे आईं?

बूँद—ज्वालामुखी के झोंके से मैं बहुत ऊँची चली गई थी। मैंने सोचा कि अब कुछ दिन आकाश की सैर की जाय। बस मैं हवा को गुदगुदाती, उसकी पीठ पर पैर रखती बरसों आकाश में घूमती रही। जब ऊपर घूमते-घूमते कई बरस बीत गए, तो सोचा कि चलूँ देखूँ, नीचे धरती है भी या ज्वालामुखी के धड़ाके में वह भी उड़ गई। मैं धरती को देखने के लिए उतरकर धीरे-धीरे नीचे आ रही थी कि यह बड़ी बूँद अचानक मेरे ऊपर टूट पड़ी। इसने मुझे बचने का अवसर ही न दिया कि झट से गटक गई। मैं हजम नहीं हुई उसके पेट में दाँत काट-काट कर दर्द करती रही। अब यह धरती पर गिरी तो इसका पेट दबा और मुँह खुलते ही मैं बाहर उछल आई। इतना कहकर बूँद रुकी, फिर बोली—मैं इतनी देर तुम्हारी इस तश्तरी पर बैठी रही। क्या तुम मुझसे इसका किराया माँगोगी?

रमा—अरी बूँद बीबी, भला हम तुमसे क्या किराया मांगेंगे। तुम विश्राम करो। कुछ खाओगी? कुछ पियोगी? ठंढाई पीसें तुम्हारे लिए? बोलो।

बूँद—तुम बहुत अच्छी लड़की हो रमा! तुम जरा इस तश्तरी को अपने से दूर सरका दो। मैं अभी थोड़ी देर विश्राम करूँगी। इतनी देर में किरन मेरे भोजन का कटोरदान लेकर आ जायगी। मैं पेट भर लूँगी और फिर हवा की पीठ पर बैठकर उड़ जाऊँगी।

८

अमोनिया से झड़प

दिनेश ने बर्फ का टुकड़ा थाली में रखा तो वह सरककर एक कोने में चला गया। रमा घबराकर बोली - दिनेश, दिनेश देखो, बर्फ में आग लगी है। दिनेश ने देखा कि बर्फ में से धुआँ-सा निकल रहा है।

दिनेश—जल्दी से लोटे में पानी भर ला। सारी बर्फ जल जायगी तो हम पानी किससे ठंडा करेंगे ?

रमा जल्दी से पानी भर लाई। और दिनेश ने बर्फ को उठा कर लोटे में डाल दिया। बर्फ ने पहले तो लोटे के पानी में गड़प से एक गोता लगाया, फिर अपनी गरदन हिलाते हुए हाथ लोटे के किनारों पर टेक दिए और सिर पानी से ऊपर निकालकर तैरने लगी।

रमा—अरी बर्फ डूब जा, डूब जा, पानी में डूब जा, नहीं तो तू जलकर राख हो जायगी। बर्फ ने रमा की ओर देखा गरदन मटकाई और हा हा हा हा करके हँस पड़ी।

दिनेश—तुम हँसी क्यों ?

बर्फ—हा हा हा हा मैं ? हा हा हा हा मैं ? जिसे तुम धुआँ समझ रहे हो वह बहुत छोटी-छोटी पानी की बूँदें हैं।

इतना कहा और वह बर्फ छाती फुलाकर लोटे के मुँह में दो चक्कर काट गई।

रमा—बर्फ बीबी हँसना बहुत अच्छा होता है, पर हर समय हँसना भी अच्छा नहीं होता।

बर्फ ने पानी में गिरते-गिरते अपने को सँभालकर कहा—तो तुम मुझ विपत की मारी को हँसने भी न दोगे ?

रमा—तुम और विपत की मारी ? बताओ विपत ने तुमको कहाँ मारा है ? तुम्हारे कहाँ चोट लगी है ?
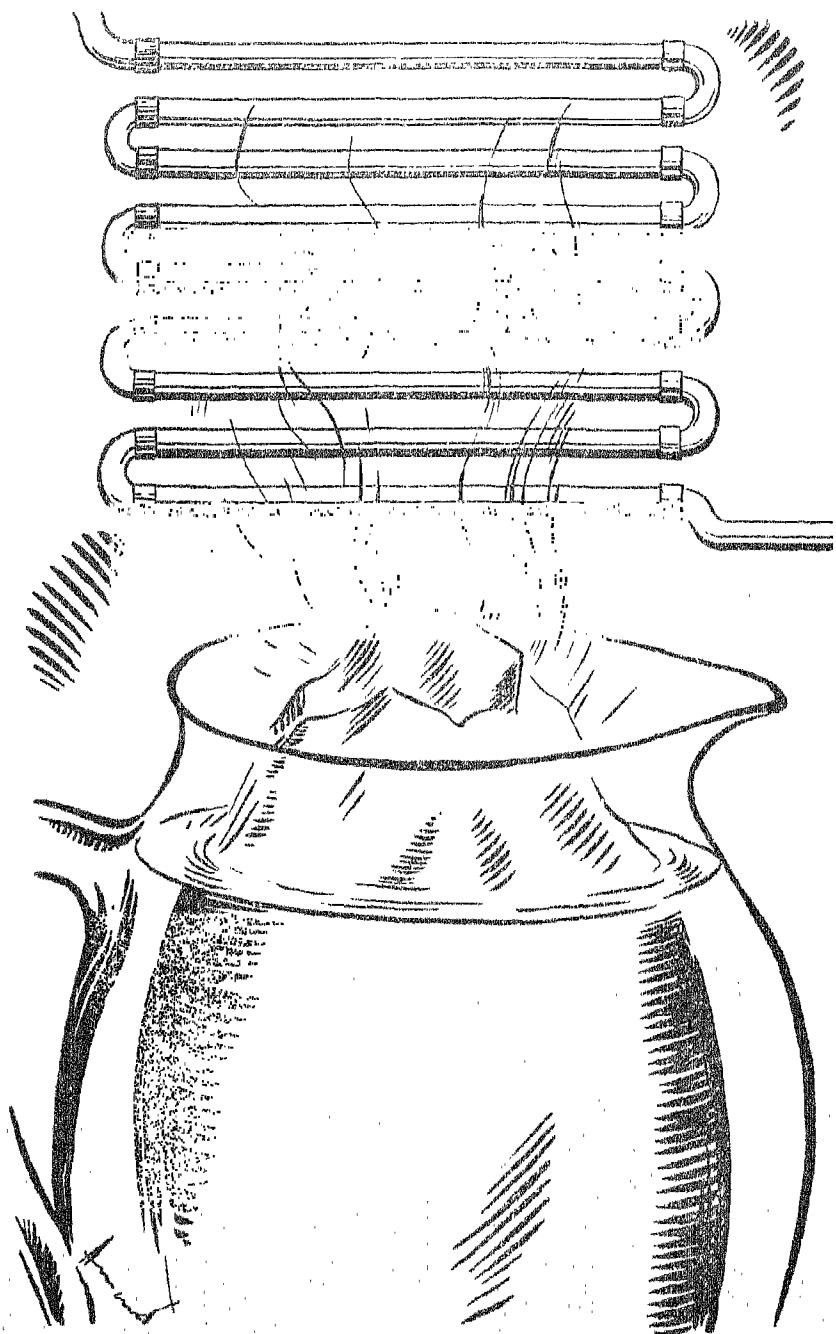
बर्फ में से धुआँ-सा निकल रहा है

बर्फ़—मैं तुमको क्या बताऊँ ? विपत ने मुझको ऐसा मारा है कि बेहाल कर दिया है। तुम पूछती हो कहाँ मारा है ? विपत ने मुझे पेट में मारा है। रमा जीजी, उसने मुझको लूट लिया है। मेरा पेट खाली कर दिया है। मैं चहकती खिलखिलाती पानी की बूँदों का एक गुच्छा थी। विपत ने मुझे सुन्न करके लँगड़ा बना दिया है। मैं अब पत्थर की तरह पड़ी रह सकती हूँ। हिल-डुल भी नहीं सकती।

दिनेश—बर्फ़ बीबी, तुम पानी की बूँदों का गुच्छा थीं। पानी की बूँदें बहुत खिलाड़ी होती हैं। हम उनको अच्छी तरह जानते हैं। तुम बताओ तुम्हारे ऊपर यह विपत कैसे पड़ी ?

बर्फ़—यह विपत ? जब विपत पड़नी होती है तो सौ बहाने निकल आते हैं। मैं बूँदों का गुच्छा थी, और नल में घूम रही थी। घूमते-घूमते मैं एक ऐसे मकान में पहुँची, जहाँ नल थर-थर काँप रहा था। और बड़े जोर का शोर मच रहा था। नल का काँपना देखकर ही मैं समझ गई कि कोई बड़ी विपत आगे आने वाली है। पर उससे बचने का कोई उपाय न था। हमें आगे की बूँदें हाथ पकड़कर आगे खींच रहीं थीं और पीछे की बूँदें धक्का दिये जा रही थीं। यह भी मुसीबत थी। इससे बचने के लिए मैंने आँखें मूँदीं, हाथों से गरदन पकड़ी, और पैर पसारकर नल से बाहर कूद पड़ी। मैं नीचे बैठी बूँदों के सिर पर गिरी। उन्होंने मुझे उठा-उठाकर इधर-से-उधर फेंकना आरंभ किया। किसी ने लातें मारीं, किसी ने घूँसा मारा। मेरे शरीर की पोरी-पोरी हिल गई। पर मैं जा कहाँ सकती थी ? पिटती रही और उनके ही सिर पर पड़ी रही। जब वे मुझे पीटते-पीटते थक गईं तो अपने-आप शांत हो गईं।

दिनेश—फिर हुआ क्या ?

बर्फ़—मैं जहाँ ठहरी हुई थी वह एक बड़ा भारी पानी का कुण्ड था। थोड़ी देर बाद उस कुण्ड में एक बड़ी हलचल आरंभ होगई। बूँदें घबराकर उछलने-कूदने लगीं, और इधर-उधर दौड़ने लगीं। समझीं, न जाने क्या होने वाला है। जितनी जल्दी इस कुण्ड से भाग चलें उतना ही अच्छा। बस जिस ओर आगे की बूँदें जाती दीखीं मैं भी उसी ओर भाग निकली। गिरती-पड़ती लदर-पदर भागी जाती थी। बड़ी भागा-भाग के बाद जब मुझे ठहरने का अवसर मिला तो मैंने देखा कि मैं एक छोटे से घर में हूँ। जिसका फर्श लोहे का है। जिसकी दीवारें पतली और लोहे की चादर की बनी हैं। पर जिसके ऊपर छत नहीं है।

रमा—तो तुम बहुत मजबूत घर में पहुँच गईं। यहाँ तुमको किसी प्रकार

का भय नहीं रहा होगा।

दिनेश—तुम तो किले में पहुँच गईं। ऐसे किले में जिसकी दीवारें लोहे की थीं।

बर्फ—मिट्टी की दीवारें लोहे की दीवारों से अधिक मजबूत होती हैं। लोहे की दीवारें तो धोखे की टट्टी हैं। वे डाकुओं से हमारी रक्षा नहीं कर सकीं।

रमा—छत नहीं थी इसीलिए तुम्हारे किले में डाकू कूद आए होंगे?

बूँद—नहीं। बात यह थी कि दीवार डाकुओं से मिल गई। वह हमें धोखा दे गई। दीवार के बाहर अगल-बगल आगे-पीछे और नीचे डाकुओं ने हमें घेर रखा था। वे हमारे पेट के ताप के भूखे थे। दीवार एक हाथ से हमारे पेट से ताप निकालती थी और दूसरे हाथ से बाहर खड़े हुए डाकुओं को दे देती थी। मैं देखती रह जाती थी। कर कुछ भी न पाती थी। जब मेरे पेट का तीसरा थैला खाली हो गया तो मैं घबराई। क्या यह दीवार मुझे एकदम लूट लेगी। मुझे क्रोध आया, मैं तनी और चेतन होकर बैठ गई। जब दीवार ने अपना हाथ मेरे पेट के भीतर डाला तो मैंने किचकिचाकर दाँतों से उसे पकड़ लिया। दीवार ने बहुत झटके दिए। बहुत रोई, बहुत गाई। पर मैंने हाथ नहीं छोड़ा, नहीं छोड़ा। दीवार ने कहा—सुनो बूँद! मैंने कहा—बोलो दीवार! दीवार बोली—तुम मेरा हाथ छोड़ दो। मैंने कहा—यह तो नहीं होगा। तुम जो मेरे पेट का ताप चुरा-चुराकर बाहर खड़े डाकुओं को दे रही हो वह? दीवार बोली—तुम मेरा हाथ छोड़ो तो मैं तुम्हें सच्ची बात बताऊं। मैंने उसका हाथ छोड़ दिया। वह अपने हाथों को मलती हुई बोली—मेरे पीछे बड़ी जल्लाद बूँदें अड़ी हुई हैं। उन्होंने बहुत-सा नमक खा रखा है और वे ताप की महा भूखी हैं। वे लगातार मेरे पेट से निकाल-निकालकर ताप खा रही हैं। मैं उनको रोक नहीं सकती और आप भूखी भी नहीं रह सकती। इसलिए मुझे तुम्हारे पेट से ताप निकाल-निकालकर पेट भरना पड़ रहा है। मैं सच कहती हूँ कि मैं इन डाकुओं से बिलकुल मिली हुई नहीं हूँ।

मैंने दीवार की बात पर विश्वास कर लिया और चिल्लाकर बोली—नमकीन पानी, अरे ओ नमकीन पानी? नमकीन पानी की एक बूँद दीवार की दूसरी ओर से जोर से बोली—क्या तुम सादे पानी की बूँद बोल रही हो? कहो क्या चाहती हो? मैंने कहा—पानी की बूँदें तो बहुत अच्छी होती हैं। तुम इतनी बुरी क्यों हो? नमकीन बूँद चिल्लाई—तुम कैसे कहती हो कि मैं बुरी हूँ? मैंने भी जोर से कहा—तुम बुरी तो हो ही, तभी तो बेचारी दीवार के पेट से ताप निकाल-निकालकर खाये जा रही हो। यह कोई अच्छी बात नहीं है।

नमकीन बूँद बोली—नाराज न होओ मेरी बीबी! मेरी कथा सुनो। मैंने कहा—सुनाओ। मैं तुम्हारी कथा सुन लूँगी,पर तुम्हारे बहकाने में न आऊँगी। वह बोली—तुम पहले मेरी विपत की बात तो सुन लो। हम तुम दोनों इस भयानक माया-जाल में आकर उलझ गए हैं। तुम्हें मालूम नहीं कि यहाँ इन लोहे की नलियों में बंद एक विचित्र प्रकार का दानव है। इसका नाम अमोनिया है। यह बहुत बुरा है। यह नाक में घुस जाता है तो बहुत बुरी तरह काटने लगता है। वह वैसे भी अच्छा नहीं है। एक सीधा पत्ता होता है लिट्मस। लाल लाल, भला चंगा और नीरोग। पर जब वह बेचारा इस अमोनिया के बीच में फँस जाता है तो यह दानव उसे इतना मारता है कि बेचारे का लाल शरीर नीला पड़ जाता है। यह नल एक बक्स में जाता है। थोड़ी देर वहाँ ठहरने के बाद फिर दूसरे द्वार से बाहर निकल जाता है। इस बक्स में जब यह बुरा अमोनिया पहुँचता है तो उसे दण्ड दिया जाता है। लोहे की सिल से उसके शरीर को कसकर दबाया जाता है। पर अमोनिया दानव ही ठहरा। वह जादू जानता है। जब उसके शरीर पर बोझ पड़ता है तो वह उड़ना बंद कर देता है और पानी की तरह तरल हो जाता है। उसे क्रोध आता है और क्रोध के मारे गरम हो जाता है। वह बहने लगता है और बहते-बहते नल के जाल में पहुँच जाता है। अपने क्रोध की गरमी से वह नल को जलाने लगता है। नल गरमी से झुलसता है और चिल्ला उठता है। ऊपर लेटा हुआ एक दूसरा नल इस नल की पुकार सुन लेता है। इस दूसरे नल में पानी होता है। यह नल अपने भीतर रहने वाले पानी से कहता है—देखो भई, इस नीचे लेटे हुए बेचारे नल को दानव अमोनिया ने अपने क्रोध से गरम कर दिया है। तुम जाओ उसकी सहायता करो। अरी सादे पानी की बूँद, तुम जानती हो कि बूँदों को ताप कितना प्यारा है। अपने नल की विनती सुनकर वे बूँदें बहुत सन्न होती हैं। मटकती हैं, खिलखिलाती हैं और नाचती हुई अमोनिया के नल पर कूद पड़ती हैं। नल पर बैठती हैं, उसके शरीर में से पकड़-पकड़ कर ताप खाने लगती हैं। थोड़ा-सा खाती हैं और फिर नीचे कूद जाती हैं। अब अमोनिया देखता है कि मैं चाहे नलको कितना ही तपाऊँ यह पानी की बूँदें सारा ताप खा जाती हैं और नल का कुछ भी तो नहीं बिगड़ता, तो वह झुँझला उठता है, और क्रोध से पागल हो जाता है। तोड़-फोड़ मचाने के लिए नलों में दौड़ पड़ता है। पर आगे मार्ग बंद मिलता है। वह बहुत खोजता है और पाता है एक बहुत छोटा-सा छेद! बस वह उसी में सिर घुसा-कर निकलने का जतन करने लगता है। सब ज़ोर लगाकर छेद के दूसरी ओर

निकल तो आता है पर उसका शरीर छितरा जाता है। वह फिर हवा-जैसा बन जाता है और ठंडा पड़ जाता है। इस छितराने में उसका पेट बहुत खाली हो जाता है और वह अधिक क्रोधित हो उठता है। नल में बिलकुल पागल की तरह उड़ने लगता है।

रमा—अमोनिया छेद में से जो निकला तो ठंडा पड़ गया। हवा बन गया और पागलों की भाँति भाग निकला।

बर्फ—नमकीन बूँद ने चिल्लाकर कहा—सुनो, मैं बहुत ज़ोर-ज़ोर से बोल रही हूँ! कान खोलकर सुनो, भूखा अमोनिया नल में भाग रहा है। वह चिल्लाता जा रहा है कि मैं भूखा हूँ, मैं भूखा हूँ। और नल के पेट में से निकाल-निकालकर ताप खाता जा रहा है। मैंने कहा—अजी नमकीन बीबी सुनो, नल का ताप अमोनिया खाय, या पूरे नल को ही खा जाय, तुम यह बताओ कि तुम हमारी दीवार से ताप क्यों छीन रही हो, जो दीवार को हमसे ताप लेना पड़ता है?

नमकीन बूँद बोली—तुम्हारी दीवार से ताप नहीं छीनूँ तो क्या करूँ? नल हमारे बीच में ही होकर गया है। जब अमोनिया नल के ताप को ले लेता है तो नल सुन्न पड़ जाता है। नल का यह सुन्न पड़ना मुझसे नहीं देखा जाता। पड़ोसी का काम है कि पड़ोसी की विपत में काम आय। मैं नल को जब सुन्न पड़ता देखती हूँ तो अपना ताप उसे दे देती हूँ। मेरा पेट खाली रह नहीं सकता इसलिए मैं तुम्हारी दीवार के पेट से ताप निकाल लेती हूँ, इसमें बुराई की बात क्या है? तुम ओछी बूँद मालूम होती हो, जो इतनी-सी बात का बुरा मान गई।

रमा—तुमने क्या कहा?

दिनेश—ठहरो रमा! क्यों बर्फ, अमोनिया ने नल का ताप छीना। नल को नमकीन पानी ने ताप दिया, नमकीन पानी ने दीवार से ताप लिया और दीवार ने तुमसे ताप लिया?

रमा—और तुमने किससे ताप लिया?

बर्फ—मैं किसी से ताप ले पाती तो बर्फ ही क्यों बनती? मेरा ताप निकल-निकलकर धीरे-धीरे अमोनिया के पेट में पहुँचता चला गया और मैं ठिठुरती चली गई। मेरा शरीर काँपने लगा और शीत से फूलने लगा। अचानक मैंने पाया कि मैं पंगु हो गई हूँ। न हिल सकती हूँ न डुल सकती हूँ, मेरे पेट का दूसरा थैला खाली हो गया है। उसमें अस्सी कौर ताप था वह सारा-का-सारा चला गया है।

रमा—तब?

बर्फ—तब मैंने अपने हाथ से पेट को पकड़ा और एक सेकिंड के लिए बेहोश हो गई।

रमा—तुम बर्फ की सिल्ली बन गईं ?

बर्फ—हां, चुप रहो तुम। मुझे बड़ा मजा आ रहा है। मैं इस समय तुम्हारे पानी से ताप ले-लेकर खा रही हूँ। मेरा दूसरा थैला फिर भरने लगा है।

तभी गड़प की आवाज आई। रमा और दिनेश ने देखा कि लोटे का किनारा बर्फ के हाथ से छूट गया है। और वह पानी में गोता खा गई है।

रमा ने पछा—बर्फ बीबी क्या हुआ ? यह तुम पिघली क्यों जा रही हो ?

बर्फ—बोलो मत। क्या तुम मुझे जीवन-भर लँगड़ा ही बनाये रखना चाहते हो ? मैं यह नहीं मानूँगी। मैं ताप खाऊँगी और पानी बनूँगी।

दिनेश—रमा यह पानी तो ठंडा हो गया।

रमा—इसकी गरमी कहाँ गई ?

बर्फ—कहाँ गई ? मेरे पेट में गई। मैंने तुम्हारे पानी की गरमी बाँटकर अपने पेट में डाल ली तो तुम्हारे पानी के पास गरमी कम होगई और वह हो गया ठंडा।

इतना कहकर बर्फ का वह छोटा-सा टुकड़ा गहरा गोता लगा गया।

रमा ने कहा—डूब गई, बर्फ डूब गई !

दिनेश ने लोटे में खोजने के लिए हाथ डाला। पर वहाँ तो बर्फ का नाम भी न था। उसने कहा—बर्फ ने अस्सी कौर ताप से अपना दूसरा थैला भरलिया है और वह पानी बन गई है। पानी अभी शीतल है। इसे जल्दी से पी जाओ, नहीं तो हवा और किरन आकर अभी इसे ताप खिलाना आरम्भ कर देंगी और यह गटागट खाने लगेगा।

रमा बोली कुछ नहीं। उसने उठाकर लोटे को मुँह से लगा लिया।

९

क़ैद की कहानी

रमा नल की कोठरी के निकट खड़ी थी। नल में से पानी गिर रहा था और उसीमें से एक गाने का सुर उठ रहा था। रमा ने दिनेश को बुलाया दोनों ने छिपकर देखा कि बूँदें खेल रही हैं और गा रही हैं। उन्होंने सुना।

एक बूँद—मैं भागी उछल।

दूसरी बूँद—मैं कूदी मचल।

तीसरी बूँद—टलमल टलमल।

चौथी बूँद—छलछल छलछल।

पहली बूँद—अरे देखो रे नल।

दूसरी बूँद—जलकल जलकल।

तीसरी बूँद—कलकल कलकल।

चौथी बूँद—छलछल छलछल।

बूँदें गाती जा रहीं थीं और नाचती जा रही थीं। वे उछलकर नाचती थीं, हाथ में हाथ डालकर नाचती थीं, और कलाबाजी खाते-खाते गुनगुनाती थीं। रमा और दिनेश बहुत देर तक उनका गाना सुनते रहे। खेल देखते रहे। और तब अचानक नल के सामने आकर खड़े हो गए बूँदों ने गाना बन्द कर दिया।

रमा—गाओ री बूँदो, गाओ। तुम चुप क्यों हो गईं?

दिनेश—और तुमने नाचना क्यों बन्द कर दिया?

बूँद—हम तो सीधी-सादी पानी की बूँदें हैं। हम नाचना क्या जानें। गाना क्या जानें। इतना कहा और उस बूँद ने एक दूसरी बूँद को मुँह में भर लिया। यह दूसरी बूँद अभी पूरी निगली नहीं गई थी कि उसने एक तीसरी बूँद को मुँह में दबा लिया। तीसरी बूँद ने अपना पेट फुला दिया तो दूसरी बूँद के मुँह में अटक गई। उसने सरगम झनकारी और हाथ हिलाते हुए कहा—हम गाना क्या जानें। हम नाचना क्या जानें।
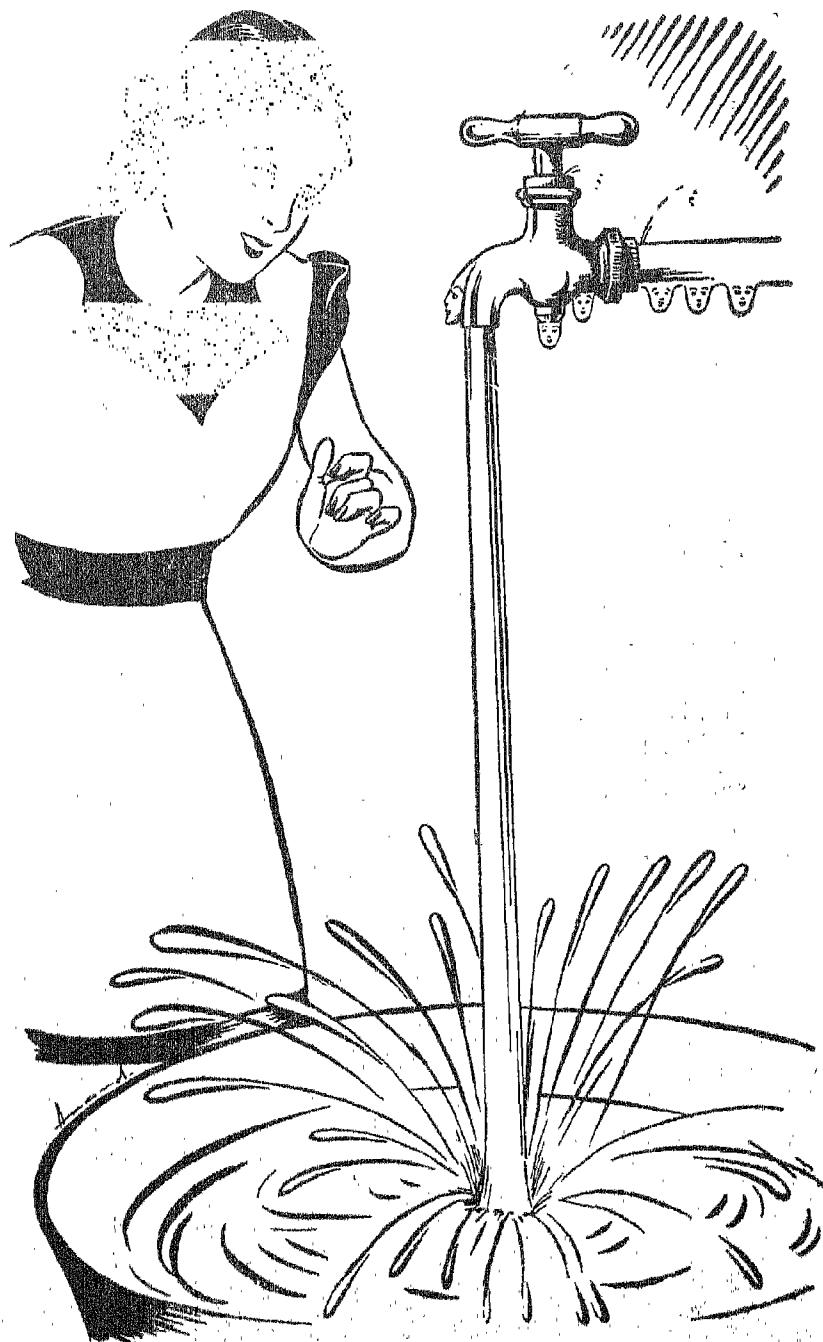
कलकल कलकल—छलछल छलछल।

दिनेश—रमा तू जरा नल बंद कर दे, तो मैं इन बूँदों से समझ लूँ। यह बहुत शैतान हैं।

दीवार से लटकी हुई एक बड़ी बूँद ने चिल्लाकर कहा—नहीं-नहीं, रमा जीजी, भगवान् के लिए नल का मुँह बन्द मत करना। इन आफत की मारी बूँदों को उसमें से निकल आने दो। आ जाओ री बूँदों, निकलो-निकलो, नल के मुँह से बाहर।

नल की कोठरी में शोर मच गया—नल बन्द न करना। नल बन्द न करना।

रमा ने कहा—अच्छा-अच्छा, मैं नल बन्द नहीं करूँगी। पर यह बताओ कि तुम नल से इतना डरती क्यों हो? नल के भीतर कौन सी आफत बैठी हुई है?

लटकती बूँद ने अपने हाथों का सहारा लिया। नल से कूदते हुए पानी को देखकर मुस्कराई। और बोली—तुम नल को जानते नहीं हो। इसके भीतर आफत ही आफत है? महा आफत है। है। यह नल एक जल-दानव की उँगली है। यह दानव अपने हाथ धरती के नीचे-नीचे फैलाये हुए हैं। इसके बहुत बड़े-बड़े पेट होते हैं। उन्हें यह खूब फुलाये रहता है और पहाड़ियों पर या किसी बहुत ऊँचे स्थान पर रखता है। यह पेट इतने गहरे होते हैं कि हाथी का भी पता न चले।

रमा—नल हमें पानी देता है। वह बहुत अच्छा है। तुम झूठ क्यों बोलती हो?

दिनेश—तुम हमारे नल को यों ही क्यों बदनाम करती हो?

बूँद—तुम लोग बड़े भोले हो। कभी तुम नल के भीतर घुसे हो? टोंटी के भीतर जाकर देखो कैसी आफत आती है?

रमा—छोटी सी टोंटी और मोटी-सी मैं। मैं भला टोंटी के भीतर कैसे घुस जाऊँगी?

बूँद—तुम तो नल के भीतर जाने से ही डरती हो। उसके भीतर भरी हुई आफत को देखोगी तो घर छोड़कर भाग जाओगी।

दिनेश—बूँद बीबी, नल में तो पानी भरा रहता है। आफत नहीं। जब हम जल की टोंटी खोलते हैं तो उसमें से पानी निकलता है आफत नहीं निकलती।

बूँद—आफत में इतना साहस कहाँ कि हमारे सामने ठहरे। हम तो उसे पकड़कर चबा जाती हैं।

रमा—तुम तो दादी की-सी बातें करती हो। बालकों की-सी बातें करो जो समझ में आयें।

बूँद—तो सुनो। एक दिन की बात है कि मैं नदी के किनारे ओस की बूँद बनी हुई एक जवासे के पत्ते पर बैठी हुई थी। और जवासे के लाल-लाल छोटे-छोटे फूलों को देख रही थी। जवासे के काँटे मेरे चुभने का जतन कर रहे थे। तभी आकाश में एक बड़ा-सा हंडा जल गया मैं समझ गई कि अब रात हो गई।

दिनेश—रात नहीं दिन हो गया।

बूँद—हंडे तो रात को जला करते हैं, दिन को नहीं। पर तुम कहते हो तो मैं मान लेती हूँ कि दिन निकल आया। रात-भर जागने के कारण मेरी आँखें नींद से भरी हुई थीं। नदी उमड़-उमड़कर बढ़ रही थी। मुझे झपकी जो आई, तो मैं लुढ़की और नदी में गिर पड़ी।

रमा—और डूब गई?

बूँद—बूँदें बहुत अच्छी होती हैं रमा! जब मैं सोती हुई नदी में गिरी और डूबने लगी तो एक बूढ़ी बूँद ने लपककर मुझे गोद में ले लिया। मुझे पता ही नहीं चला। जब मेरी आँखें खुलीं तो मैंने पाया कि चारों ओर अँधेरा-ही-अँधेरा है। मैं घबराकर चिल्ला उठी। मैंने पूछा कि मैं कहाँ हूँ? बूढ़ी बूँद ने मेरे कपोलों को थपथपाते हुए कहा—हम एक जल-दानव के पेट में हैं मैं तुम्हें गोद में लिये दौड़ी जा रही थी कि अचानक बे-बस हो गई, और किनारे की ओर खिंचने लगी। मैंने बचने का बहुत जतन किया पर तुम मेरी गोद में सो रही थीं, इसलिए मैं तेजी से उछल-कूद नहीं कर सकती थी। मैं तुझे गोद में लिये-लिये ही तट के निकट खिंच आई। वहाँ पहुँचकर मुझे पता चला कि हम एक जल-दानव के फंदे में फँस गए हैं। जिस प्रकार सागर में रहनेवाला दानव उड़ते पक्षी की परछाईं पकड़ लेता था और उसे नीचे गिराकर खा जाता था, उसी प्रकार जो बूँदें जल-दानव के मुँह के निकट आ जाती हैं वे उसके मुँह में खिंच जाती हैं।

रमा—तुम उस दानव की बात कह रहे हो जिसे लंका जाते समय हनुमान जी ने मारा था।

बूँद—हाँ, मैं इस जल-दानव के पेट में पड़कर अँधेरे में घबरा गई। वहाँ बहुत-सी बूँदें थीं, पर सब चुप थीं। न कोई नाचती थी, न कोई उछलती थी, न कोई खिलखिलाती थी, और तो और वे बात-चीत और कानाफूसी तक भी न करती थीं, मुझे ऐसा स्थान बहुत बुरा लगा। मैं सोच में पड़ गई। क्या करूँ

तभी मुझे लगा कि मेरा पेट धीरे-धीरे खाली होता जा रहा है। मैं बूढ़ी बूँद से चिपट गई। बोली—दादी दादी, मेरे पेट में न जाने क्या गड़बड़ हो रही है? बूढ़ी ने कहा—घबराओ नहीं, मैंने अपनी गोद में बैठाकर जो मिट्टी तुम्हें खिलाई है, यह जल-दानव का पेट उसी को तुम्हारे पेट से छीन रहा है। मेरा पेट भी तो खाली होता जा रहा है। पर हम बेबस हैं। इस जल-दानव के सामने कर ही क्या सकते हैं?

दिनेश—तब तुमने क्या किया?

बूँद ने अपना मुँह फुलाकर सीटी बजाई। और बोली करती क्या। मैं दादी की गोद में चुपचाप पड़ी रही। मिट्टी मेरे पेट से निकलती गई। मैं सो गई पर सोई भी कब तक रहती? फिर जग गई दादी से पूछा—हम इस जल-दानव के पेट से कब बाहर निकलेंगे। मेरा तो साँस घुटा जा रहा है। दादी ने कहा—यह जल-दानव एक विचित्र दानव है। ऐसा एक दानव हर एक नगर में होता है इसके दो ही अंग होते हैं। पेट और हाथ, हाथ दो होते हैं और पेट कई-कई।

रमा—जब जल-दानव के पेट और हाथ ही होते हैं तो वह खाता-पीता कैसे है?

दिनेश—उसका मुँह कहाँ होता है?

बूँद—बताती हूँ। यह दानव अपने पेटों को किसी पहाड़ी या ऊँचे स्थान पर रखता है। इसका एक हाथ मोटा पर छोटा होता है। इस हाथ में उँगलियाँ नहीं होतीं ठूँठ-मात्र होता है। जल-दानव इस हाथ को धरती के नीचे-नीचे छिपाकर नदी तक पहुँचा देता है और वहाँ पानी में डाल देता है। बस इस हाथ में ही इसका मुँह होता है। मैं और मेरी दादी इसी मुँह में होकर उसके पेट में पहुँची।

रमा—अच्छा!

दिनेश—फिर क्या हुआ?

बूँद—मैं वरुण का नाम जपने लगी। उनकी प्रार्थना करने लगी। मैंने कहा—हिम बनकर हिमालय पर विश्राम करने वाले वरुण की जय हो। बादल बनकर आकाश में विचरने वाले वरुण की जय हो। पानी बनकर नदी में बहने वाले वरुण की जय हो। भाप बनकर इंजिन को चलाने वाले वरुण की जय हो। सागर बनकर मछलियों को पालने वाले वरुण की जय हो। बूँदों को बन्धन से उबारने वाले वरुण की जय हो। बूँदों के देवता वरुण की जय हो। मुझे प्रार्थना करते जो सुना, तो सभी बूँदें वरुण की स्तुति करने लगीं और

जल-दानव के पेट में वरुण का जय-जयकार मच गया।

रमा—तब तो जल-दानव का पेट बड़ा घबराया होगा?

बूँद—वरुण की प्रार्थना ने तुरत ही प्रभाव दिखाया। बूँदें उत्साह से चिल्ला उठीं। एक चहल-पहल उठी और हलचल मच गई। दादी ने कहा—चलो इस पेट से तो छुट्टी मिली। अब हम इस दानव के दूसरे पेट में जायँगे। मैंने पूछा—क्यों? तो दादी ने बताया कि यह पेट अब हमारे पेट में से अधिक मिट्टी नहीं निकाल सकता। पर यह दानव ऐसा है कि हमारे पेट को एकदम मिट्टी से खाली किये बिना नहीं मानेगा। इसलिए हमें अब यह अपने दूसरे पेट में ले जा रहा है। मैं और भी घबरा गई। मैंने कहा—दादी, मैं तो बड़ी मुसीबत में पड़ गई। तुम मेरा हाथ न छोड़ना। दादी ने मुझे दिलासा दिलाया। और कहा—घबरा मत, मैं तेरे साथ हूँ। बूँद की बेटी को दुःख चाहे कोई कितना ही दे ले, पर उसका कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता।

दिनेश—फिर तुम उसके दूसरे पेट में पहुँची?

बूँद—हम धीरे-धीरे गुनगुनाते हुए आगे बढ़े। और एक गोल अँधेरी सुरंग में झूमते हुए चले।

दिनेश—अच्छा, यह ठाठ थे तुम्हारे!

रमा—जिसे तुम सुरंग कहती हो वह नल होगा।

बूँद—हाँ, तुम ठीक कहती हो। वह एक बहुत मोटा नल था। उसमें हम कुछ नीचे उतरे और कुछ ऊँचे चढ़े। यह सुरंग छोटी थी। वह जल-दानव के दूसरे पेट में जाकर समाप्त हो गई। मैंने अँधेरे में अचानक जो पैर बढ़ाया, तो बड़े जोर से नीचे गिरी। मुझे लगा कि अब सिर फूटे बिना नहीं रहेगा। मैं आँखें बन्द करके दादी से चिपट गई। हम दोनों एक मोटी बूँद के पेट पर गिरीं। उसने क्रोध में आकर जो पेट फुलाया तो हम उछलीं और बहुत दूर जा पड़ीं। अँधेरा तो था ही, दादी से मेरा साथ छूट गया। मैं जल्दी से सँभलकर बैठने ही वाली थी कि बहुत-सी बूँदें ऊपर से मेरे ऊपर कूद पड़ीं। मैं बेचारी उनके नीचे दब गई। मैं बहुतेरी चिल्लाई पर वे मेरे ऊपर से हिलीं तक नहीं। जब मेरा दम घुटने लगा तो मैंने अपने हाथ-पैर ढीले छोड़ दिए और साँस रोककर लेट गई।

दिनेश—इतनी बूँदों के बोझ के नीचे तुम पिसी नहीं?

बूँद—जब मैं साँस रोक लेती हूँ तो भारी-से-भारी बोझ भी मेरे लिए तिनके-जैसा हो जाता है।

दिनेश—यह तो बोझ उठाने की बड़ी अच्छी तरकीब है।

बूँद—हाँ। सभी बूँदें इस उपाय को जानती हैं। दानव के पेट में जो अंग मेरी मिट्टी छीनते हैं। वे एकदम तली में थे। मैं धीरे-धीरे उस तली की ओर सरक रही थी। सोच रही थी कि आगे न जाने क्या मुसीबत आने वाली है। पर बहुत देर तक मुझे इस सोच-विचार में न रहना पड़ा। मैंने सरकते-सरकते अपने पैर नीचे लटका दिए तो वह पत्थर के मोटे टुकड़ों पर टिक गए। सहारा मिला तो मेरी घबराहट दूर हुई और मैं उन पत्थर के टुकड़ों में सँभल-सँभलकर नीचे उतरने लगी। मैं ज्यों-ज्यों नीचे उतरती जाती थी पत्थर के टुकड़े छोटे होते जाते थे। जब मैं एकदम नीचे पहुँची तो देखा कि वहाँ बहुत महीन रेत पड़ी हुई है और मुझे इन रेत के कनों पर पैर रखकर नीचे उतरना है। तुमको पता नहीं कि रेत के कनों में होकर उतरना कितना कठिन काम है।

रमा—रेत के कन तो छोटे-छोटे होते हैं। उनमें होकर उतरना कौनसा कठिन काम है ?

बूँद—रमा जीजी, यही तो तुम्हें पता नहीं। जब मैं रेत के कनों पर पैर रख-रखकर नीचे उतर रही थी तो मैं पसीने से तर-बतर हो रही थी। मेरा शरीर कभी तो साँप की तरह लम्बा हो जाता था और कभी पत्ती की भाँति चपटा। मैं अनेक बार औंधे मुँह गिरी और बेहोश हो गई। पर मेरे पीछे जो बूँदें आ रही थीं, उन्होंने मुझे उठा-उठाकर खड़ा कर दिया। एक छन भी सुस्ताने के लिए नहीं ठहरने दिया। राम-राम करके हाँफती और काँपती हुई जब मैं रेत के पार निकली तो एकदम बेसुध होकर गिर पड़ी। कितनी ही बूँदों ने मुझे ठोकर मारी। जब जगी तो पता चला कि मेरा पेट एकदम खाली हो गया है। दानव ने मेरे पेट में से रत्ती-रत्ती मिट्टी निकाल ली है।

रमा—तब तुमने क्या किया ?

बूँद—मैं करती क्या ? पेट मिट्टी से खाली था। हाँ, कुछ बहुत छोटे कीड़े मेरे पास अब भी थे। मैंने उनको पाल लिया था। वे इतने छोटे थे कि बड़ी-बड़ी आँखों से भी नहीं दिखते थे। बस मैं उन्हीं से मन बहलाने लगी। पर यह जल-दानव तो मेरे पीछे ही पड़ गया था। थोड़ी देर में उस दानव के पेट की दीवार में से एक बहुत तेज गंध वाला रस निकल आया। वह गंध इतनी तेज थी कि मैं बेहोश होने लगी। होने क्या लगी, हो ही तो गई। जब वह गंध दूर हो गई तो मैंने आँखें खोलीं। देखा कि मेरे पाले-पोसे वे सारे कीट मर चुके हैं। मुझे बड़ा दुःख हुआ। पर मैं डरी हुई इतनी थी कि उनके लिए रो भी न सकी।

रमा—दिनेश भाई, वे छोटे जंतु कौन थे ?

दिनेश—मुझे तो ऐसा लगता है कि यह बूँद हमारे नगर के जल-कारखाने

की टंकी में पहुँच गई थीं रोग फैलाने वाले कीटाणु इसके पास थे। वे ब्लीचिंग के पानी से मारे गए।

रमा—ब्लीचिंग क्या ? वही जिससे धोबी कपड़े धोते हैं ?

दिनेश—हाँ वही। कैसी बुरी गंध आती है उसमें।

दिनेश—पर वह कपड़े तो साफ करता है और बीमारी के कीटाणुओं को भी मारता है।

रमा—हाँ बूँद बीबी, फिर तुम पर क्या बीती ?

बूँद—अब मैं सुरंगों में होती हुई जल-दानव के एक ऐसे पेट में पहुँची, जो एक पहाड़ी के ऊपर है। यह दानव इतना बुरा है कि हमारी सारी मिट्टी छीनकर और हमारे पाले-पोसे सब जंतुओं को मारकर भी हमें छोड़ने को तैयार नहीं है। हमें अपने-आप ही इसके फंदे से निकल भागने का मार्ग खोजना पड़ा। कुशल केवल इतनी है कि इस दानव की भुजाएँ और उँगलियाँ खोखली हैं। मैंने उसकी भुजा खोज निकाली और उसके भीतर चली गई। यह बहुत मोटी भुजा थी। मैं ज्यों-ज्यों आगे बढ़ी तो मैंने देखा कि इसकी भुजा में से भुजा निकलती है। मोटी भुजा में से पतली भुजा, और पतली में से फिर उससे पतली। मैं एक पतली भुजा में चली गई। और फिर पतली से पतली में चलती गई। तुम जानते हो कि इस दानव की यह पतली-पतली भुजाएँ और उँगलियाँ मकानों में घुस जाती हैं और छतों पर चढ़ जाती हैं। इसकी हर एक उँगली में मुँह होता है। यह जल-दानव इतना बुरा है कि हमारे निकलने के लिए अपने-आप कभी मुँह नहीं खोलता। जब तुम लोग टोंटी खोलते हो तभी हम इस भयानक दानव के चंगुल से निकल पाते हैं।

रमा—जल-दानव बहुत बुरा है यह तो मान लिया। पर तुम यह तो बताओ कि तुम यहाँ छत तक कैसे चढ़ आती हो ?

बूँद हँसी। बोली—जल-दानव का पेट पहाड़ी पर है। हम बूँदें सदा नीचे को लुढ़कती हैं। तुम्हारी छत पहाड़ी से नीची है। हम लुढ़कते-लुढ़कते उसकी भुजाओं में होकर तुम्हारी छत पर आ गए। अच्छा अब तुम मेरे सामने से हट जाओ। मैं नीचे कूदूँगी।

रमा ने कहा—अरी बूँद बीबी; इतनी क्रुद्ध न होओ, तनिक देर और ठहरो।

बूँद ने एक नहीं सुनी। वह खिलखिला कर हँसी। हाथ को सिर पर रखा। शरीर को गोल मटोल किया, और फर्श पर कूद पड़ी। दिनेश ने देखा कि उसने फर्श पर दो कलाबाजियाँ खाईं और नल से निकलकर भागती हुई बूँदों के बीच डुबकी लगाकर आँखों से ओझल हो गई।

१०

कुए में कौन

रमा और दिनेश खेतों में घूमने गये। वे कभी दौड़कर चले, कभी धीरे-धीरे चले। चलते-चलते बहुत दूर निकल गए तो उनको प्यास लगी। वे कुए के पास गये। कुए पर एक डोल पड़ा था। इस डोल में एक जंजीर बँधी थी। दिनेश ने डोल कुए में डाला, और पानी भरकर खींच लिया। डोल की तली में पन्द्रह छेद थे। जिनमें होकर पानी तलतल-तलतल बह रहा था। दोनों ने जैसे-तैसे पानी पिया और फिर कुए की जगत पर सुस्ताने के लिए बैठ गए। दिनेश ने चारों ओर निहारा और फिर फूटे डोल की ओर देखा। उसने पाया कि एक बूँद डोल के नीचे दबी हुई है। बूँद ने अपना सिर तो बाहर निकाल लिया है पर पूरा शरीर नहीं निकाल पा रही है। उसे बहुत दुःख हो रहा है। दिनेश को दया आई। उसने डोल उठा लिया। डोल हटा तो बूँद ने अपना शरीर हिलाया, सिमटी और गोल-मटोल होकर बैठ गई। उसने मुँह पर हाथ फेरा और आँखें फाड़कर दिनेश को देखा, वह सहमी, उसने उछलने का जतन किया। पर काँपती हुई वहीं बैठी रही।

दिनेश ने रमा से कहा---देखो रमा, यह बूँद इस गर्मी में भी कैसी काँप रही है।

रमा– अरे हाँ, कैसी काँप रही है। इसे बुखार चढ़ा है।

दिनेश---क्यों री बूँद, तुझे बुखार चढ़ा है? लाऊँ रजाई तेरे लिए?

रमा---दिनेश, तुम्हारी बोली सुनकर तो यह बूँद थरथरा उठी है। यह बुखार से नहीं, डर से काँप रही है। बोलो बीबी, तुम क्यों काँप रही हो?

बूँद ने फर्श पर हाथ टेककर अपने को साधा। और फिर बोली---तुम लोग कौन हो? मैंने तुमको पहले कभी नहीं देखा। मैं तुम्हें नहीं पहचानती। क्या तुम पेड़ हो?

रमा ठठाकर हँस पड़ी। बोली---दिनेश हम पेड़ हैं। दिनेश, यह बूँद

बूँद ने पूछा—रमा जीजी, क्या तुम पेड़ हो ?

कहती है कि हम पेड़ हैं।

दिनेश ने देखा कि बूँद और भी अधिक काँपने लगी है, और वह वहाँ से बह जाने की कोशिश कर रही है।

दिनेश—बूँद बीबी, तुम इतना डरो नहीं, काँपो नहीं और हमसे भागो भी नहीं। हम पेड़ नहीं मनुष्य हैं।

बूँद ने छाती फुलाकर कहा—तुम समझते हो कि मैं तुमसे डरती हूँ। अरे मनुष्यों, बूँद कभी किसी से नहीं डरती। मैं हवा के झोंको पर ताल दे रही हूँ। और तुम समझ रहे हो कि मैं तुम्हारे डर से काँप रही हूँ। मेरे जीवन में एक समय था जब मैं चाहती तो काँप सकती थी। पर तब भी नहीं काँपी तो अब क्या काँपूगी।

रमा—वह कौन सा समय था जब तुम काँप सकती थीं और नहीं काँपी ?

बूँद—उस समय को हजारों बरस बीत चुके हैं।

दिनेश—हजारों बरस। तुम जरा-सी तो बूँद हो,और हजारों बरस की बात करती हो। रमा यह बूँद झूठ की पुतली है। हमें बहकाना चाहती है।

बूँद—मैं तुमको बहकाती नहीं हूँ। बूँदें सभी सीधी और सच्ची होती हैं। मैं तुम्हें करोड़ों बरस पहले की बात सुनाती हूँ। मैं अपने पेट की चौथी थैली को ताप से भरकर हवा के घोड़े पर चढ़कर बैठ गई। और फिर उसे एड़ लगाकर आकाश में उड़ा दिया। मैं एड़ लगाती गई और उड़ती गई, जब बहुत ऊँची पहुँच गई तो हवा ने कहा कि मैं तुमको और ऊँचा नहीं ले जा सकती। मैंने उसे दाँतों से काटा और कहा—और ऊँचा, और ऊँचा। हवा कुछ ऊँची और उठी, फिर उसका साँस फूलने लगा, उसने मेरे नीचे से निकल भागने का बहुत जतन किया। जब मैंने किसी प्रकार भी उसे न छोड़ा, तो वह चिल्ला उठी। मेरे घोड़े की पुकार सुनकर हवा का एक दल तुरत उसकी सहायता को आ पहुँचा। उसने आते ही मेरे पेट की चौथी थैली में से सब ताप निकाल लिया। मैं भूख की मार से घोड़े की पीठ पर से नीचे गिरने लगी। मैं थोड़ी-सी ही नीचे गिरी थी कि सँभल गई। मैंने उत्तर की ओर देखा तो पाया कि बहुत ऊँचे पहाड़ पर एक लम्बी चमकदार रेखा खिंची हुई है। मैंने सोचा कि इस पहाड़ को न पार किया तो जीवन में कुछ न किया। बस मैंने झपटकर हवा का एक दूसरा घोड़ा पकड़ लिया। और मैं उसके ऊपर चढ़ गई। मुझे गिराने के लिए वह खूब ही हिनहिनाया। उसने बड़ी दुलत्तियाँ झाड़ीं। लोट-लोट गया। मैं घुड़सवारी में पक्की थी. मैंने उसे अपने नीचे से निकलने न दिया। मैंने उसकी पीठ थपककर कहा—उड़ चल मेरे घोड़े, ऊपर उड़ चल। घोड़े को उ[illegible]ना

पड़ा। वह बहुत दूर तक मुझे ले गया। पर जब बड़े-बड़े पहाड़ों के निकट पहुँचा तो डर गया। बैठ गया। पुचकारने से जब नहीं उठा तो मैंने उसे पीटना आरम्भ किया। तुम जानते हो कि धरती के ऊपर चारों ओर हवाई घोड़े दौड़ते रहते हैं। अपने साथी को जो पिटते देखा तो हवा का एक घोड़ा पीछे से दौड़ता हुआ आया, और मेरे सिर को मुँह में पकड़कर पहाड़ की ओर भागता चला गया।

रमा—उस घोड़े के दाँत तुम्हारे सिर में चुभे नहीं ?

बूँद—हवाई घोड़ों के दाँत शेर-चीतों के दाँतों की भाँति तेज और नुकीले नहीं होते, वे रुई से भी कोमल होते हैं। बस वह घोड़ा मुझे लिये हुए झोंके खाता पहाड़ के ऊपर पहुँच गया। मैं पहाड़ देखना चाहती थी, पर मेरी आँखें तो बूँद के मुँह में बंद थीं। पर्वत दिखता तो कैसे दिखता। मैंने अपना सिर बूँद के मुँह से निकाल लेने का जतन किया, उसने मेरा सिर नहीं छोड़ा। जब और कोई उपाय न सूझा तो मैंने गरदन टेढ़ी करके अपने दाँतों से उसके मुँह में काट खाया। मेरे दाँत जो चुभे तो उसने चिल्लाकर मुँह खोल दिया और मैं नीचे गिर पड़ी। मेरे गिरते ही हवा का एक भूखादल बाघ की भाँति मेरे ऊपर टूट पड़ा। पलक मारते ही उसने मेरे तीसरे और चौथे थैले को ताप से खाली कर दिया। मैं ठंड से ठिठुरी और जम गई।

दिनेश—जम गई,

रमा—बर्फ बन गई ?

बूँद—हाँ मैं हिम बन गई। तुम्हारे उत्तर में जो पर्वत है वह हिम का घर है। इसीलिए वह हिमालय कहलाता है। मैं उस समय बड़ी विपत्ति में फँस गई थी। वह भूखी हवा का दल मेरे पहले थैले का भी ताप निकालना चाहता था। मैं घबराई और घबराहट में एक ओर को भाग निकली। मैं आँखें बंद किये हुए थी और भागी चली जा रही थी। कभी इधर मुड़ती थी, कभी उधर। हवा के झोंके मेरा पीछा कर रहे थे। इसी दौड़-भाग में मैं एक रुई के गद्दे से टकरा गई।

रमा—देखो बूँद बीबी, तुमने फिर झूठ बोला। आकाश में रुई का गद्दा कहाँ से आया ?

बूँद ने पैर फैलाये और कोहनी का सहारा लेकर लेटते हुए कहा—सुनो-सुनो, वह रुई का गद्दा नहीं था, वह सफेद-श्वेत हिम थी, जो मीलों तक बिछी पड़ी थी। जहाँ तक दृष्टि जाती थी हिम-ही-हिम दिखाई पड़ती थी। मैं हिम के अपने देश में पहुँच गई थी। वहाँ मैं अपनी कितनी ही पुरानी सखियों से मिली

और उनके हाथ-में-हाथ डालकर लेट गई। घूम-घूमकर कलामुण्डी खाती रही। हवा फुङ्कार-फुङ्कार कर हमारे ऊपर झपटती थी, और हम खिलखिला-खिलखिलाकर उसे भगा देते थे। हमारा समय बड़े आनन्द से बीत रहा था। यह समय था जब मैं ठंड से काँप सकती थी, पर उस समय मैं बिलकुल नहीं काँपी।

रमा—नहीं काँपी तो क्या हुआ?

बूँद—एक दिन मैंने जो खिलखिलाने को मुँह खोला तो ऊपर से एक बूँद हिम बनकर गिरी। मैं अपना मुँह बंद भी न कर पाई थी कि उस बूँद का एक पैर मेरे मुँह में होता हुआ सीधा पेट तक चला गया। मैं चिल्ला तो सकती ही न थी। वैसे बहुत कसमसाई। एड़ी से चोटी तक का जोर लगाया। पर उसका पैर मेरे मुँह से नहीं निकला।

रमा—बड़ी बुरी बूँद थी वह। जो तुम्हारे मुँह में अपना पैर डालकर ही भूल गई।

बूँद—इसमें उस बूँद का कोई अपराध नहीं था। वह बेचारी कुछ न कर सकती थी। उसके ऊपर हजारों बूँदें हिम बनकर धड़ाधड़ बरस रही थीं। मैं और वह दोनों इस नई हिम के नीचे दब गईं। कई दिन तक जोर लगाकर हम इस नई हिम को उठाये रहीं। पर नई हिम तो लगातार गिरती जा रही थी। बोझ इतना अधिक हो चला कि मेरी हड्डियाँ चटकने लगीं। और साँस रुकने लगी। तब मैंने अपना शरीर ढीला छोड़ दिया और साँस बंद करके सो गई। मैं बहुत दिनों तक सोती रही।

रमा—तब तो तुम कुम्भकर्ण की नानी बन गईं।

बूँद—कुम्भकर्ण की नानी ही नहीं, नानी की नानी और उसकी भी नानी। कुम्भकर्ण तो छः महीने ही सो पाता था। मैं लाखों वर्ष सोती रही। मैं नीचे सोती रही और बर्फ ऊपर पड़ती रही। हिम पर बर्फ और बर्फ पर हिम। इतनी कि एक मोटी तह बन गई। मैं इस हिम के नीचे दबती चली गई। एक दिन अचानक मेरी नींद खुल गई। जागी तो मैंने देखा कि मेरे ऊपर बहुत बोझ है और मुझे इसे उठाने के लिए मेहनत करनी पड़ रही है। इस मेहनत से जो गर्मी उत्पन्न हुई तो मेरे पेट का दूसरा थैला ताप से भर गया। और मैं फिर बन गई पानी।

दिनेश—तुम्हारे मुँह में जो दूसरी बूँद का पैर फँसा हुआ था उसका क्या हुआ?

रमा—वह भी पानी बन गया होगा।

बूँद—हाँ। वह बूँद भी पानी बनी तो उसने अपना पैर मेरे मुँह में से

निकाल लिया। पर इससे मुझे कोई लाभ नहीं हुआ। हिम का सारा बोझ तो मेरे ऊपर बना ही हुआ था।

दिनेश—तुम यह बताओ कि तुम उस हिम के नीचे से निकलीं कैसे ?

बूँद—सुनो। तुम तो बहुत जल्दी करने लगे। देखो कैसी मज़ेदार हवा चल रही है। हाँ, तो मैं सोच में पड़ गई कि अब क्या किया जाना चाहिए। भाग निकलने का मार्ग कहीं दिखाई नहीं दिया। तभी हमें लगा कि हमारे ऊपर जो हिम है उसके पैर फिसल रहे हैं। वह धीरे-धीरे एक ओर को सरक रही है। जरा सोचो, एक मकान के बराबर ऊँची चट्टान हमारे सिरों के ऊपर होकर सरक रही थी। हम उसके नीचे इस प्रकार पिस रही थीं, जैसे कि सिल पर बट्टे के नीचे चटनी। हम अपने सिरों को बहुत छिपा-छिपाकर बचा पाती थीं। कुशल थी कि हिम के नीचे हम भी थोड़ा-थोड़ा सरक रही थीं। ज्यों-ज्यों हम अधिक दूर तक सरकते गए, हमारी गति बढ़ती गई।

एक दिन की बात है मेरे मार्ग में एक शिला—पत्थर की शिला—अड़ गई। शिला बड़ी भारी और बलशाली थी। मैंने कहा कि बीबी मार्ग छोड़ दो, वरुण की सेना के सामने पड़ना अच्छा नहीं होता। पीछे पछताओगी। उसने मुँह बिचका दिया। मेरी एक नहीं सुनी और बोली—यह तो मेरा घर है तुम मुझे यहाँ से हटाने वाली कौन होती हो ? रमा जीजी, क्या बताऊँ। कई बरस तक उसने मेरा मार्ग रोके रखा। पत्थर की शिला की ढीठता का समाचार हिम की धारा को भी मिल गया। बस एक दिन हिम-धारा ने खेल-खेल में उस शिला के ठोकर मार दी। पैर छूते ही उसके तो अंग-अंग बिखर गए। शिला का चिह्न भी वहाँ न रहा। और हम लोग हिम-धारा से ढके हुए आगे बढ़े। हम गाना गाते जाते थे और आगे सरकते जाते थे। तभी आगे की बूँदों की आवाज हमें सुनाई दी। वे चिल्ला रही थीं। सावधान, सावधान।

मेरी समझ में नहीं आया, कि सावधान किससे रहूँ। ऊपर हिम-धारा है नीचे धरती है। मुझे भय किसका है। मैं अभी इसी विचार में थी कि मेरे पैरों के नीचे से धरती निकल गई। मैंने पाया कि मैं नीचे गिरी जा रही हूँ। मैं चिल्लाई, पर वहाँ सम्भालने वाला कोई न था। बहुत देर गिरते रहने के बाद मैं एक गुफा में पहुँची। वहाँ मेरी कई साथिनें मुझ से पहले ही पहुँच गई थीं। मुझे बूँदों ने बताया कि उस हिम-धारा से बूँदों की रक्षा करने के लिए वरुण देवता ने हिम-धारा के मार्ग में वह छोटा-सा छेद बना दिया है। भाग्यशाली बूँदें उसी मार्ग से भागकर हिम-धारा के बोझ से बच जाती हैं।

रमा—यह हिम-धारा क्या है ?

बूँद—जब हिम की चट्टानें बहुत मोटी हो जाती हैं तो वे फिसलकर सरकने लगती हैं। इस सरकती हुई हिम की नदी को हिम-धारा कहते हैं।

दिनेश—अंग्रेजी में जिसे ग्लेशियर कहते हैं।

बूँद—हाँ, अब हिम-धारा से मेरा पीछा छूट गया। वह पर्वत के ऊपर-ऊपर सरकती रही और मैं गुफा में पहुँचकर विश्राम करने लगी। तुम जानते हो कि हम बूँदें बहुत घुमक्कड़ होती हैं। हम एक जगह ठहर जाती हैं, तो हमारे पेट में दर्द होने लगता है। बस मैंने अपनी कुछ सहेलियों को साथ लिया और उस अँधेरी गुफा की छान-बीन के लिए चल पड़ी। टहलते-टहलते हम एक अजगर के नीचे घुसने लगे। वह जो फुङ्कारा तो हम वहाँ से भागे। इस भगदड़ में मेरी कई पुरानी साथिनें बिछुड़ गईं। फिर मैंने नई सहेलियाँ बना लीं। और अपनी छान-बीन का काम जारी रखा। वह गुफा बहुत लम्बी थी। खोजते-खोजते जब हम बहुत दूर निकल गए तो एक सहेली ने कहा—चलो, अब तो लौट चलो कहीं रास्ता भूल गए, तो बड़ी आफत में फँस जायँगे। सब-की-सब बूँदें उसकी बातें सुनकर हँस पड़ीं। एक बोली—यह डरपोक हमारे साथ कहाँ से आ गई? दूसरी ने कहा—भई, ध्यान से देख लो यह सच्ची बूँद भी है या नहीं? कहीं कोई वेश बदलकर तो बूँद नहीं बन गया है? कुछ बूँदें अँधेरे में उसकी परीक्षा लेने लगीं। इसी समय हमें अत्यन्त निकट ही सिंह की दहाड़ सुनाई दी। दहाड़ सुनते ही मैं काँपी। उछलना नहीं चाहती थी फिर भी उछल पड़ी। और वरुण की दया यह हुई कि जाकर सिंह की ही नाक पर गिरी। मैंने नाक पर पैर टेका ही था कि सिंह को छींक आ गई। अब मैं उड़कर एक पत्थर की शिला से टकराई। सिर फूटते-फूटते बचा। यहाँ मैं एकदम अकेली थी। डरते-डरते मैं शिला से नीचे उतरने लगी कि मेरी टक्कर एक दूसरी बूँद से हो गई। टकराकर हम दोनों हँस पड़ी। दोनों को धीरज बँधा। हम चट्टान पर घूम रहे थे तो चट्टान के छेद हमारे पैर पकड़कर हमें नीचे खींच लेने का जतन कर रहे थे। हम दोनों को बहुत सँभल-सँभलकर और तेजी से चलना पड़ रहा था। दौड़ते-दौड़ते हम उस चट्टान की एक नोक पर पहुँचे। हमने एक दूसरे का हाथ पकड़ा, एक, दो तीन पुकारा, और अँधेरे में कूद पड़ीं। हम एक पत्ती पर गिरीं। पत्ती काँपी तो नीचे कूद गईं। अब हम पहुँची ऐसे स्थान पर जहाँ बहुत-सी भूखी बूँदें पत्थरों को काट-काटकर खा रही थीं। पत्थर की शिलाएँ भाग तो सकती नहीं थीं वहीं पड़ी-पड़ी कराहती थीं। बूँदों का थपेड़ा जब ज़ोर से लगता था तो चिल्ला उठती थीं। हम बूँदें देखने में छोटी होती हैं पर होती हैं महा विकट। कठोर-से-कठोर चट्टान को हम दाँतों से काट-काटकर रेत

बना लेती हैं और बहा ले जाती हैं।

रमा—यह तो कोई नई बात नहीं है। जो छोटे होते हैं वे खोटे भी होते हैं।

बूँद—तुम तो ऐसी बात न कहो, रमा जीजी! बूँदों के खोटेपन से तो तुमको लाभ ही होता है। हजारों वर्षों से हिमालय की चट्टानें काट-काट कर हमने तुम्हारे लिए इतनी उपजाऊ धरती बना दी है कि तुम आज मौज करती हो।

दिनेश ने पूछा—पर जब बूँदें आंधी होकर बहती हैं और हमारे खेत तथा घर बहा ले जाती हैं तब?

बूँद—दिनेश भाई, तुम तो मुझसे लड़ने लगे। जो बूँद तुम्हारा खेत बहा ले गई हो, उसे पकड़ो। मुझसे क्यों झगड़ते हो?

रमा—यह बताओ कि इस कुए में तुम कैसे पहुँचीं?

बूँद—बूँदें बड़ी परिश्रमी होती हैं। बूँद जब आकाश से उतरती है तो उसे यही धुन रहती है कि सागर कैसे पहुँचा जाय। चाहे उसे पहुँचने में लाखों वर्ष लग जायँ पर वह जाना सागर की ही ओर चाहती है। मैं भी सागर जाना चाहती हूँ।

रमा—धरती के भीतर छिपकर?

बूँद—हाँ। धरती के ऊपर होकर जाने में सैकड़ों जोखिम हैं। कोई जानवर पी जाय। किसी नल के फंदे में फँस जायँ। कोई नहर बहा ले जाय। किसी जड़ की पकड़ में आ जायँ। और इन सबसे भी यदि बच जायँ तो न जाने कब शैतान किरन अपनी झोली लेकर आ जाय, ताप खिला दे और फिर आकाश में उड़ा ले जाय। मैं इन जोखिमों से बचना चाहती थी। इसलिए जब लाखों बूँदें नाले के मार्ग से यात्रा कर रहीं थीं तो मैंने गीली रेत में अपना सिर छिपा लिया। रेत में छिपने वाली मैं अकेली नहीं थी। मेरे आगे और भी बहुत सी बूँदें थीं। मैं उन्हीं के पीछे-पीछे चलती गई। धरती के भीतर बूँदों ने सुरंगें बना रखी हैं। इन सुरंगों में जगह-जगह पर धर्मशाला बनी हैं। बूँदें चलती हैं इनमें ठहरती हैं और आगे बढ़ती जाती हैं।

दिनेश—धरती के भीतर धर्मशाला?

बूँद—धर्मशाला ही नहीं बनी हैं, सदाबरत भी लगा है। मार्ग में भाँति-भाँति की स्वादिष्ट चट्टानें हैं जिन्हें चाटकर यात्री बूँदें अपना पेट भरती हैं।

रमा—धर्मशाला कैसे बनी? किसने बनवाई?

बूँद—चट्टानों के आड़े तिरछे होने के कारण धरती के भीतर बहुत-सी

कंदराएँ रह गई हैं। बूँदें इन कंदराओं में पड़ाव डालती हैं। वहाँ की चट्टानों को चाटकर पेट भरती हैं। जब विश्राम कर चुकती हैं तो आगे चल देती हैं।

रमा—तुम इस कुए में कैसे आ गईं ?

बूँद—धरती के नीचे बहते हुए पानी को निकालने के लिए जो गड्ढा तुम खोदते हो वही तो कुआ है। मैं आज ही इस कुए में आई हूँ। यहाँ मुझे अपनी कई पुरानी सखियाँ मिलीं। एक ने मुझसे कहा—धरती के भीतर मुँह छिपाये-छिपाये सागर पहुँच जाने में क्या आनन्द है ? जीवन का क्या मजा है ? आनन्द इसमें है कि ऊपर चलें और दुनिया देखें। उसकी बात मुझे अच्छी लगी। जब तुमने यह डोल कुए में डाला तो वह और मैं दोनों ही इस डोल में बैठकर ऊपर आ रही थीं। वह डोल के छेद के मार्ग से फिर नीचे लौट गई और मैं अकेली आ गई ऊपर।

रमा—क्या तुम फिर अपनी सहेली के पास कुए में जाना चाहती हो ? बोलो, भेजें ?

बूँद ने दोनों हाथ हिलाये और जल्दी से कहा—नहीं-नहीं। मुझे तुम लोग बहुत अच्छे लगते हो। यह खेत, यह पेड़, यह आकाश सब बहुत अच्छा लग रहा है। हवा के झोंके मुझे सुहा रहे हैं। किरन की गर्मी मुझे भा रही है। मैंने ऐसा सुन्दर संसार पहले कभी नहीं देखा था। तुम मुझे यहीं रहने दो। मुझे कुए में से निकाला इसके लिए तुम्हें और तुम्हारे डोल को अनेक धन्यवाद।

दिनेश—हम तुम्हारी क्या सहायता कर सकते हैं।

बूँद—मैं यही चाहती हूँ कि अब मुझे कोई न छुए। वह देखो उस खेत पर कोई तुम्हें बुला रहा है।

रमा और दिनेश ने मित्र की पुकार सुनी तो बूँद को भूल गए। और जल्दी से ईख के खेत की ओर दौड़ निकले।

११

ओला गिरा

बादल गरजा और बहुत जोर से आँधी आई। पत्तियाँ फड़फड़ाईं और किवाड़ खड़खड़ा उठे। हवा के झोंके साँय-साँय करके दीवारों से अपना सिर टकराने लगे। अँधेरी छा गई और टीन के ऊपर टपाटप की आवाज सुनाई देने लगी।

रमा बरामदे में से कूदकर आँगन में चली गई। पुकारा—दिनेश यहाँ आ जाओ; बड़ा मजा आ रहा है।

और दिनेश भी कूदकर आँगन में आ गया। ठंडी-ठंडी हवा लगी तो वे उछलने लगे। बूँदें और भी बड़ी पड़ने लगीं। बूँदें पड़ती जाती थीं और रमा-दिनेश उछलते जाते थे। वे ताली बजा-बजाकर नाच रहे थे। एकाएक आँधी का एक तेज झोंका आया और आकाश में बड़े जोरों की गड़गड़ाहट हुई। टीन पर से तड़ातड़ की आवाज आने लगी। दिनेश और रमा ने सिर पर हाथ रखा और चिल्ला उठे—भागो-भागो।

दोनों गिरते-पड़ते जल्दी से सायबान में पहुँचे। टीन पर तड़-तड़ मच रही थी। दिनेश ने कहा—मेरी कनपटी पर लगा यहाँ, इतना बड़ा। इतनी जोर से।

रमा—और मेरी नाक पर लगा इतना मोटा सा। और सिर पर यहाँ और यहाँ भी।

दिनेश—यह तो और जोर से गिरने लगे।

रमा—इन ओलों को खाना चाहिए।

वे ओले बीनने के लिए सायबान से बाहर निकले तो ओले और भी तेज हो गए। और उछल-उछलकर सायबान में आने लगे।

रमा—क्यों दिनेश यह ओले कूद-कूदकर सायबान में क्यों आ रहे हैं?

दिनेश—इसलिए कि हम उनको खा लें।

बूँद बोली—वह बूँद ! वह बूँद बड़ी भयानक थी

इसी समय एक छोटा-सा ओला आकर रमा के सिर से टकराया बोला—नहीं—नहीं।

दिनेश ने हाथ बढ़ाकर उस ओले को लपक लिया। बोला—यदि हमारे खाने के लिए नहीं, तो फिर तुम हमारे सायबान में क्यों घुसे चले आ रहे हो? यह सायबान तुम्हारा नहीं, हमारा है।

ओले ने दिनेश के हाथ में चक्कर काटते हुए कहा—इसलिए कि ऊपर से गिरने वाले ओले हमारी खोपड़ी पर गिरकर उसे चूर-चूर न कर दें।

दिनेश झुँझलाया। उसने ओले को मुट्ठी में कसकर पकड़ने का प्रयत्न किया। पर वह ओला एक ही चंचल था। उसने हथेली में कलाबाजियाँ खाईं और उँगलियों के बीच से सटक ही गया। फर्श पर पहुँचकर दो बार उछला, दिनेश की ओर मुँह बिचकाया और फिर गिरता-पड़ता ओलों के समूह में जाकर मिल गया।

दिनेश और रमा क्रुद्ध हो गए। रमा बोली—दिनेश इन ओलों को समेट लो और उठाकर बाहर फेंक दो। दिनेश ने ओले समेटे तो सब ओले समेट में आ गए पर एक ओला उछटकर दूर निकल गया। रमा चिल्लाई—वह भागा, वह भागा। उसे भी पकड़ो दिनेश!

दिनेश—तू ही उठा ला न उसे।

जब रमा उस ओले को उठाने गई तो वह ओला इधर-उधर चक्कर काटने लगा और बोला—रमा जीजी, ऐसा भी क्या अंधेर है! मैं धरती के भीतर गई तो वहाँ से भगाई गई। आकाश में चढ़ी तो वहाँ से फेंकी गई। अब तुम मुझे धरती पर भी न रहने दोगी?

रमा—अरे तुम तो ओले के भीतर से कोई लड़की बोल रही हो। बताओ तुम कौन हो?

ओले में से सुर आया—मेरा नाम बूँद बीबी है। मैं हवा की शैतानियों से ओला बन गई हूँ। तुम मेरी रक्षा करो।

इतनी बात जो सुनी तो रमा को दया आ गई। वह एक कटोरी उठा लाई और ओले को उसमें रख दिया।

दिनेश ने रमा का यह करतब जब देखा तो पूछा—क्यों रमा? तुमने और सब ओलों को तो फिंकवा दिया और इस अकेले को कटोरी में सँभालकर रख लिया। क्या बात है? फेंको इसे भी।

रमा—यह धरती के भीतर गया तो वहाँ से मारकर भगाया गया, और आकाश में उड़ा तो वहाँ से पकड़कर नीचे फेंक दिया गया।

दिनेश—रमा तुम बहुत सीधी लड़की हो। यह ओला तुमको बहका रहा है। लाओ इसे भी बाहर फेंक दें।

दिनेश की बात सुनकर उस ओले ने बार-बार सिर झुकाया, गिड़गिड़ाया, हाथ जोड़े और फिर रो दिया। इतने आँसू बहाये उसने कि उसका शरीर आँसुओं में ही घुलने लगा।

दिनेश—देखो रमा, यह धोखेबाज ओला पानी बनकर बह जाने की बात सोच रहा है।

दिनेश की बात सुनी, तो कटोरी में पानी थर्राया। उसमें से सुर आया—मैं ओले के बीच की बूँद बोल रही हूँ। रमा जीजी ने जो कहा है वह सच कहा है। मैं एक दिन हवा की पीठ पर चढ़ी आकाश में सैर कर रही थी। तभी बादल जोर से दहाड़ उठे और बिजली कड़की। यह इतना अचानक हुआ कि मैं डर गई और हवा की पीठ पर से कूद धरती की ओर भागी। मैं इतनी घबराई हुई थी कि मुझे यह नहीं सूझा कि जा कहाँ रही हूँ। जब एक वृक्ष की शाखा से टकराई तो मुझे सुधि आई। हाथ फेरकर देखा तो मेरा सिर साफ बच गया था। सिर बच जाने की पूरी प्रसन्नता मुझे नहीं हो पाई थी कि मैं छटपटाने लगी। शाखा के एक छेद ने मेरे पैर पकड़ लिए थे और मुझे अपने भीतर खींचना आरम्भ कर दिया था। सागर की छाती पर तरह-तरह की कसरतों का अभ्यास मैंने किया था। वह इस समय काम आ गया। मैंने अपना सिर अपने पैरों में डालकर जो उलटी उड़ी लगाई तो इस शाखा से छूट दूसरे वृक्ष के पत्ते पर जा गिरी। पत्ते से टकराई तो वह पत्ता गुर्राया और कोप से भरकर थरथराने लगा। मैंने उसे न हाथ बढ़ाने का मौका दिया न मुँह खोलने का अवसर। सरपट दौड़कर जो उछली तो एक घास के सिर पर गिरी। इस घास ने अपने सिर पर एक भाला बाँध रखा था। वह सीधा मेरे शरीर के आर-पार हो गया। मेरी जान निकल गई। पर मैंने छाती कड़ी करके सब सहा। मुँह से चीख नहीं निकलने दी। मैं भाले में सरकते-सरकते उसकी मूँठ तक पहुँच गई और शरीर को समेट लिया। एक छन अपने शरीर के घावों पर हाथ फेरा और फिर घास के कंधों पर पैर रखती हुई नीचे उतर गई। मैंने धरती पर पैर रखा ही था कि मुझे एक जड़ दिखाई दी। संसार में यदि किसी से मुझे डर लगता है तो इन जड़ों से। बूँदों के ऊपर यह तनिक भी तो दया नहीं दिखातीं। मैं सहम कर रह गई। पर मिट्टी को निकट पाकर मेरी भूख भड़क उठी। मैं मिट्टी में उतरना भी चाहती थी और जड़ से बचना भी चाहती थी। मैं इसी सोच-विचार में थी कि मेरे निकट की एक बूँद बोली—घबराती क्यों हो? दूसरी बूँदों

के पीछे छिपकर मिट्टी में उतर जाओ। आजकल इतनी बूँदें धरती पर उतर रही हैं कि जड़ें उन सबको नहीं पकड़ सकतीं।

रमा—बरसात के दिन रहे होंगे वे?

बूँद—हाँ, वर्षा तेजी से हो रही थी। धरती पानी से तर थी। मैंने अपनी सखी की बात मान ली। जोखिम तो जीवन में उठाने ही होते हैं। बस मैं जड़ के कंधे से कंधा रगड़ती हुई धरती पर उतरने लगी। जड़ के चारों ओर इतनी बूँदें थीं कि उसे मेरी ओर देखने का समय ही न मिला। पर फिर भी वह मार्ग में बाधा डाले बिना न रही।

दिनेश—वह कैसे?

बूँद—मैं मिट्टी के एक कन को खाना चाहती थी। मैंने उसे खींच ले जाने के लिए बहुत जोर लगाया। पर एक नन्ही-सी जड़ ने उसे ऐसा कसकर पकड़ा हुआ था कि मेरे सैंकड़ों झटके लगाने पर भी उसने उसे न छोड़ा। तब मैंने उस कन को चाटकर ही संतोष किया और आगे बढ़ गई। यह आठ हजार मील मोटी जो धरती है इसका ऊपरी भाग छोटे छोटे मिट्टीके कनों का बना हुआ है। कन जब एक दूसरे से मिलते हैं तो उनके बीच थोड़ी जगह बची रह जाती है। मेरे मन में जोखिम उठाने की भावना जागी। मैंने सोचा कि नीचे उतरना चाहिए। देखूँ मैं कितना नीचा उतर सकती हूँ। बस मैंने कमर कसी और ताल ठोककर नीचे उतरना आरम्भ कर दिया। चारों ओर अँधेरा था। टटोल-टटोलकर आगे बढ़ना होता था। मैंने पैर लटकाकर नीचे के कन को छुआ, उस पर पैर जमाया और ऊपर के कन को हाथ से छोड़ दिया। बंदर की तरह उतरकर नीचे के कन पर बैठ गई, सुस्ताई और फिर आगे चलने लगी। मैं जिस कन पर बैठती थी, उसको चाट लेती थी इससे मेरा पेट सदा भरा रहता था। मैं गुनगुनाती जाती थी और नीचे उतरती जाती थी। नीचे पैर रखती थी और ऊपर हाथ छोड़ती थी। पैर रखा और हाथ छोड़ा। पैर रखा और हाथ छोड़ा। यही मेरा काम था। एक बार ऐसा हुआ कि मैंने पैर लटकाये और जल्दी से हाथ छोड़ दिए। हाथ छोड़ते ही मैं गिरी, वैसे ही जैसे कि आकाश से ओला गिरता है। मैं चीखी, मेरी चीख अँधेरे में गूँज गई। मैं गिरती चली गई।

रमा—कहाँ गिरीं तुम?

बूँद—मैं गिरी एक सोने के टुकड़े पर। मेरे गिरने से उसे चोट लगी तो उसने मुझे उठाकर फेंक दिया। मेरा सिर जाकर एक चट्टान से टकराया और मैं गेंद की भाँति उछलकर फिर गिरने लगी। अब जब मैंने पैर टेके तो एक बूँद के सिर पर। उसने मुझे उछाला तो मैं एक दूसरी बूँद पर जा गिरी। बूँदें

इस प्रकार की उछल-कूद से कभी बुरा नहीं मानतीं। हम सब चुटकी बजाते ही सहेली बन गईं और सुरंग में नीचे उतरने के लिए अपनी बारी पर तैयार होकर खड़ी हो गईं। सुरंग पतली थी और हमारे सामने बहुत सी बूँदें थीं। एक बूँद आगे उतरती थी तो दूसरी बूँद उसकी पूँछ पकड़कर चलती थी।

रमा—बूँदों के क्या पूँछ भी होती है?

बूँद—हमें भगवान् वरुण का ऐसा वरदान है कि हम जैसा चाहें वैसा शरीर बना सकती हैं। हम सूँड लगाकर हाथी बन सकती हैं और सींग लगाकर गैंडा। कुब लगाकर ऊँट बन सकती हैं और पूँछ लगाकर बंदर। बस हम उतरते गए, नीचे उतरते गए। कई दिन बाद मुझे लगा कि शरीर को एक भीना-भीना आनन्द आ रहा है। ध्यान देने से ज्ञात हुआ कि मैं ताप खा रही हूँ और मेरे पेट का तीसरा थैला भरा आरहा है। मैं खिल उठी और विहँसती हुई नीचे उतरने लगी। सोच लिया—अब मैं ऐसी जगह पहुँची जा रही हूँ जहाँ जोखिम तो कोई है ही नहीं, भोजन की भी कमी नहीं है।

रमा—गर्मी कहाँ से आई नीचे?

दिनेश—अरी तू भूल गई कि धरती माता के पेट में आग भरी है। ज्यों-ज्यों हम गहरे जाते हैं ताप की तेजी बढ़ती जाती है। यही धरती के पेट का ताप इस बूँद को खाने को मिला था।

रमा—क्यों बूँद बीबी, दिनेश भाई ठीक बता रहे हैं?

बूँद—मैं इतना ही जानती हूँ कि ज्यों-ज्यों मैं नीचे उतरती गई, ताप मेरे मुँह में आता चला गया और मेरे पेट का तीसरा थैला भरता गया। मैं नीचे उतर रही थी कि एकाएक रुकना पड़ा। ऐसा लगा कि बूँदें ऊपर को भाग रही रही हैं। मुझे ऊपर को धक्का दे दिया गया है। मैं घबराई। पर घबराहट दूर करने का समय ही न मिला। उस सुरंग से निकलकर मैं पानी पर गिर पड़ी। यह पानी ताप खा-खाकर मगन हो रहा था। नीचे जाता था। दो कौर ताप पेट में डालता था और फिर ऊपर आ जाता था। जब कभी अधिक ताप खा जाता था तो ऊपर आकर भलभलाकर उछल पड़ता था। मैं भी उस अन्धकार में उनके इस खेल में जा मिली। उस समय मुझे यह पता नहीं था कि धरती के भीतर मेरा यह सबसे नीचा पड़ाव है। मैं अब इससे नीचे नहीं जा सकूँगी।

दिनेश—क्या वहाँ से नीचे कोई सुरंग नहीं जाती थी?

बूँद—जाती होगी। मुझे मालूम नहीं। जो मेरे साथ बीती वह मैं सुनाती हूँ। मैं एक बार उस छोटे से गड्ढे की तली तक जाकर बहुत सा ताप खा आई। ऊपर आई तो मगन होकर उछल पड़ी। पानी से ऊपर मैं और मेरी बहुत-सी

सहेलियाँ उछल तो आईं, पर जब हमने नीचे लौटना चाहा तो अपने को बेबस पाया। हमें पता चला कि हम एक पतली सुरंग के मुँह में अटक गए हैं, हमने एक बार फिर उस गड्ढे में कूद जाने का जतन किया पर तभी नीचे से और भी बूँदें आकर उस सुरंग में फँस गईं। मैं और भी ऊपर चढ़ा दी गई। बस अब यह हुआ कि ज्यों ही मैं नीचे जाने की बात सोचती, नीचे का पानी उछलकर सुरंग में आ जाता था। और हम, और भी ऊँचे चढ़ जाते थे। कई पखवाड़ों तक हम इस प्रकार ऊपर चढ़ते रहे। एक दिन मेरी चढ़ाई का अंत आ गया। मैंने देखा कि अंधकार से निकलकर मैं उजाले में आ गई हूँ। एक बड़ा-सा सरोवर है। बहुत से मनुष्य उसमें नहा रहे हैं। चिड़ियाँ चहचहा रही हैं। और कमल खिल रहे हैं। उनके कुछ पत्ते पानी से ऊपर उठे और कुछ पानी पर तैर रहे हैं। एक चहल-पहल मची हुई है। मुझे यह सब बहुत अच्छा लगा। मैं कुछ देर तक छोटी-छोटी नावों का तैरना देखती रही फिर मन में उमंग जो उठी तो दौड़कर एक कमल के पत्ते पर चढ़ गई। बस यही गजब हो गया।

दिनेश—कमल के पत्ते पर लोटने-पोटने में तो बड़ा आनन्द आया होगा?

बूँद—हाँ आनन्द तो आया। पर वहीं मेरी शैतान सहेलियाँ हवा और किरन मुझे मिल गईं। लहरों ने मुझे इधर-उधर लुढ़काया, किरन ने धड़ाधड़ ताप खिलाया। हवा ने उठाकर पीठ पर लादा और फुर हो गई। मैं चिल्लाई—मुझे छोड़ दो। मैं अभी इस सरोवर में नहाना चाहती हूँ, तैरना चाहती हूँ, पर हवा ने मेरी एक न सुनी। वह मुझे उड़ा ले गई। ऊँचे और बहुत ऊँचे उड़ा ले गई। इतने ऊँचे कि वहाँ से धरती दीखनी बंद हो गई और हवा के डाकू-दलों ने धावा बोलकर मेरे पेट की चौथी थैली का सारा ताप निकाल लिया, मैं बूँद बनकर हवा में तैरने लगी।

दिनेश—जो छोटी-छोटी बूँदें हवा में ऊँची तैरती हैं वे बादल होते हैं।

रमा—तुम डरकर आकाश से भागी थीं और फिर आकाश में ही जा पहुँचीं।

बूँद—हाँ, पर मैंने अब समझ लिया कि डरना बेकार है। उससे कोई लाभ नहीं होता। इसलिए मैंने डरना बंद कर दिया। और किलक-किलककर अपनी सहेलियों के साथ आकाश में आँखमिचौनी खेलने लगी। एक बदलिया हवा को एड़ लगाकर आगे भगाती और दूसरी अपने घोड़े पर चढ़कर उसका पीछा करती। वे गिरती-पड़ती, उछलती-कूदती, भागी जाती थीं। खेल खेल-कर जब हम थक गए तो हमने हवा को तंग करने की योजना बनाई। हम दस-पन्द्रह बूँदों ने मिलकर एक साथ उसकी पीठ में काट खाया, वह चड़चड़ाई,

झल्लाई और उसने पुकारकर अपने उन साथियों को बुला लिया जो बहुत भूखे थे, ढीठ थे और डकैती करते थे। हवा के इस दल ने आकर हमारे ऊपर धावा बोल दिया। उसने मेरे तीसरे और दूसरे थैले को ताप से बिलकुल खाली कर दिया। मैं काँपी, ठिठुरी और जम गई। नीचे को गिरने लगी, तो हवा ने फूँक मारकर फिर ऊपर को उड़ा दिया। मैं ऊपर को चली तो एक दूसरी बूँद मेरे चारों ओर लिपट गई। मैं पेट फुलाकर और कंधे हिलाकर उसे अपने ऊपर से हटा देने का जतन कर रही थी कि हवा के एक दूसरे दल ने हमला बोला। और उस बूँद के पेट का भी दूसरा थैला खाली कर गया। वह काँपी और ठिठुरकर मेरे ऊपर ही जम गई। मुझे इससे बड़ी अकबकाई लगी। मैं धरती की ओर दौड़ी, पर थोड़ा ही नीचे जा पाई थी कि हवा ने फिर फूँक मारी। और मैं तीर की तरह फिर ऊपर चढ़ गई। इस चढ़ाई में दो-तीन गिरती बूँदों ने सहारा लेने के लिए मेरे ऊपर पैर टेक दिए। वे मुझसे चिपट गईं। मैं बहुत चिल्लाई—छोड़ो, छोड़ो। पर वे तो बुरी तरह डरी हुई थीं और काँप रही थीं। उनको काँपते देखा तो हवाई डाकुओं की चढ़ बनी। उनके एक छोटे दल ने हमें घेर लिया और उन बूँदों के भी पेट से ताप छीनकर चम्पत हुए। वे बेचारी भी ठिठुरकर मेरे ऊपर जम गईं। मैं फिर घबराकर धरती की ओर भागी। मैं नीचे को भागती और हवा फूँककर ऊपर उड़ा देती। हवा के तूफान की झकझोर में बार-बार नीचे ऊपर जाकर ओला इतना बड़ा होगया कि अब जब वह धरती की ओर दौड़ा तो हवा की लाखों फुङ्कार भी मेरा कुछ न बिगाड़ सकीं। हवा ने एड़ी से चोटी तक का बल लगाकर फूँकें मारीं। वह सब बेकार गईं। और मैं उसके मुँह को चीरती छाती को फाड़ती धरती की ओर दौड़ निकली।

रमा—तो ओला तूफान में बनता है?

दिनेश—और हवा का मुँह तोड़ता हुआ नीचे गिरता है?

बूँद—हाँ। मैं जब हवा के शरीर को छेदती हुई नीचे दौड़ी आ रही थी तो ओले के ऊपर जमी बूँदों ने हवा से ताप छीन-छीनकर अपने पेट का दूसरा थैला भर लिया। वे पानी बन गईं और गद-गद ओले के ऊपर से कूद गईं। ओला धरती की ओर दौड़ता गया और छोटा होता गया।

रमा—आकाश से ओले बड़े-बड़े चलते हैं और धरती तक पहुँचने में पिघलकर छोटे हो जाते हैं।

दिनेश—बूँदें आकाश से छोटी चलती हैं और मार्ग में दूसरी बूँदों को खा-खाकर बड़ी हो जाती हैं।

बूँद—मुझे न धरती के भीतर चैन मिला न आकाश में शान्ति। क्या तुम

इस कटोरी में भी मुझे विश्राम न करने दोगे ?

रमा—करो, करो। जब तक चाहो विश्राम करो। आराम से बैठो, लेटो और सो जाओ। हम तो अब ओले खाने जाते हैं।

बादल गरज रहे थे। ओले गिर रहे थे। टीन तड़-तड़ बोल रही थी और रमा तथा दिनेश बड़े-बड़े ओले बीनकर मुँह में रख रहे थे।

१२

तैरती चट्टान

दिनेश ने पुस्तक खोली तो रमा चित्रों की दुनिया में पहुँच गई। उसमें बहुत-सी रंग-बिरंगी तस्वीरें थीं। रमा ने एक चित्र को ध्यान से देखा तो पाया कि नीचे पानी है, उसके ऊपर चट्टान और चट्टानपर एक जानवर बैठा है। रमा चकित हुई। उसने पूछा—दिनेश भाई, चट्टान और यह जानवर पानी में डूब क्यों नहीं जाते ?

दिनेश ने कहा—चट्टान होती तो अवश्य डूब जाती। यह चट्टान नहीं है लकड़ी का टुकड़ा मालूम होता है।

दिनेश की बात सुनकर कागज काँपा, तस्वीर झिलमिलाई, चट्टान उछली और बोली—नहीं-नहीं। नहीं-नहीं। ओहो, मैं लकड़ी हूँ लकड़ी। हाहा-हाहा जी हाहा-हाहा। अरे भाई-बहनो, मैं लकड़ी बिलकुल नहीं हूँ। मैं हूँ चट्टान। पत्थर-सी कठोर और हंस-सी सफेद चट्टान।

रमा ने पूछा—यदि तुम चट्टान हो तो पानी में डूब क्यों नहीं जातीं ?

चट्टान—पानी दूसरी चट्टानों को डुबाता है, अपनी चट्टान को नहीं। मैं पानी की अपनी चट्टान हूँ।

रमा और दिनेश अब हँस पड़े। बोले—हम तुम्हारे बहकावे में नहीं आते। पानी चट्टान नहीं पालता। हमारे यहाँ बाल्टी में दिन-रात पानी भरा रहता है। उसने तो एक कंकरी तक भी पालकर हमें नहीं दिखाई।

चित्र की चट्टान बोली—मैं तुमको अपनी कथा सुनाती हूँ। तुमने सागर का नाम सुना होगा। वह बहुत बड़ा देश है।

रमा—सागर तो समुद्र को कहते हैं उसमें पानी भरा होता है। वह देश कैसे हुआ ?

वह चट्टान मुस्काई। बोली—सागर संसार का सबसे बड़ा देश है। उसमें बूँदें बसती हैं। वे भाँति-भाँति की मछलियाँ, शंख-सीपी और बहुत बड़ी-बड़ी ह्वेलें पालती हैं।

चट्टान ने कहा—सागर बहुत बड़ा देश है।

दिनेश—तुम अपने को पानी की चट्टान कहती हो। क्या तुमको भी उन्होंने पाला हुआ है ?

चट्टान ने मुँह बिचकाया और बोली—बूँद बेचारी मुझे क्या पालेगी ?

रमा—क्यों ? तुम ऐसे कौन से तीसमारखाँ की नानी हो ?

चट्टान—बूँदें सब बराबर होती हैं। बूँद-बूँद को नहीं पालती।

रमा—क्या तुम बूँद हो ?

चट्टान—तुमने हमको अभी तक नहीं पहचाना रमा जीजी ! यह बूँदों का एक दल है। हमारा यह दल लाखों वर्षों से समुद्र में घूम रहा है। वह बहुत दिनों तक जावा द्वीप के किनारे नारियलों को उछाल-उछाल कर खेलता रहा। फिर एक तूफान पर चढ़कर दौड़ पड़ा तो अफरीका के तट से जाकर टकराया। वहाँ से पलटा खाया तो अटलाण्टिक में से होकर भूमध्यसागर में जा पहुँचा। यहाँ से हम आकाश में उड़कर आगे बढ़े। और उड़ते-उड़ते उत्तर की ओर चले गये। हम उड़े ऊँचे और बहुत ऊँचे और फिर दूर और बहुत दूर। जब नीचे उतरे तो फिर समुद्र मिला। इस समुद्र में ठण्ड बहुत थी। इतना शीत था कि ठण्ड के मारे हम काँप भी नहीं सकती थीं।

रमा—यह तो बड़ी अजब जगह पहुँच गईं तुम। कौन स्थान था यह ?

चट्टान—यह वह स्थान था जो धरती के एकदम उत्तर के कोने पर है। इसे उत्तरी ध्रुव कहते हैं। वहाँ जो सागर है वह हिम सागर कहलाता है। बस हम इस हिम सागर में उतरीं और वहाँ की बूँदों से हिल-मिल गईं।

दिनेश—यह तो हमने पहले भी सुना है कि हिम सागर में ठण्ड बहुत पड़ती है। पर वहाँ इतनी अधिक ठण्ड क्यों पड़ती है ?

चट्टान यह शीत इसलिए पड़ती है कि ध्रुव पर जो हवा है उसे ताप खाने को नहीं मिलता। हवा जब भूखी होती है तो बूँदों से छीन-छीनकर ताप खा जाती है।

रमा—हवा को ताप खाने को क्यों नहीं मिलता ?

चट्टान—हवा बहुत स्वार्थी होती है। हवा को जो ताप मिलता है वह सूरज से आता है। ध्रुव सूरज से दूर है। सूरज के निकट जो हवा पड़ती है। वही सारे ताप को खा जाती है। ध्रुव की हवा तक कुछ भी नहीं पहुँचने देती। वह बेचारी भूखी तड़पती रहती है।

दिनेश—तब तो यह हवा बहुत बुरी है।

चट्टान—बुरी तो है ही, और बूँदें बहुत अच्छी हैं। वे जो कुछ खाती हैं मिल-बाँटकर खाती हैं। हम जो हिम सागर में उतरीं तो उसे अच्छी तरह देखना

भी चाहा। हवा के दल हमारा ताप छीनने के लिए हमारे ऊपर टूट पड़े, पर हमने उनकी तनिक भी चिन्ता नहीं की। हम उछलकर उनके कंधों पर सवार हो गए और दूर-दूर तक फैले हुए बूँदों के देश को देखकर आनन्द से खिल-खिलाये और हँस पड़े। हमारे सफेद-श्वेत दाँत मोती से चमक उठे। उनकी सुन्दरता देखने के लिए तीन बड़ी-बड़ी ह्वेलें हमारे सामने आकर खड़ी हो गईं। ह्वेल संसार का सबसे बड़ा जीव है। आठ-दस हाथी मिलें तो एक ह्वेल के बराबर हों।

रमा—आठ-दस हाथी?

दिनेश—इतनी बड़ी ह्वेल को देखकर तुम डरी नहीं?

चट्टान—डरती क्यों?

रमा—ह्वेल यदि तुम को खा जाती तो?

चट्टान खिलखिलाई। हम ह्वेलों से डरते नहीं। हम ह्वेलों को पालते हैं।

दिनेश—अच्छा; तो जब ह्वेलें तुम्हारे दाँतों को देखने आईं तो तुमने क्या किया?

चट्टान—मैं हवा के कंधे पर से उछली और सबसे बड़ी ह्वेल की पीठ पर कूद पड़ी। मैंने सोचा था कि इस पर बैठकर थोड़ा सैर करूँगी। पर ह्वेल की पीठ बहुत चिकनी होती है। हमने जो उस पर पैर टेके तो वे ऐसे फिसले, ऐसे फिसले, कि मैं हजार कलामुण्डियाँ खाकर भी सँभल न पाई। लुढ़कती-पुढ़कती सागर में आ पड़ी। हमने सागर के ऊपर तैरना चाहा, पर तैर न सकी हाथ-पैर ही न हिले। नीचे ही डूबती चली गई। इतनी कमजोरी पाई तो मुझे ध्यान आया कि हवा मेरे पेट में से बहुत-सा ताप निकाल ले गई है। मुझे ऐसा लग रहा था कि हम अब फिर कभी सागर के ऊपर न उठ सकेंगे। आकाश में जलते हुए बिजली के हंडे को न देख सकेंगे। हम वरुण देवता से बिनती करने लगीं। हमने कहा—हे वरुण भगवान् तुम एक ह्वेल को भेज दो, वह हमें खा जाय और हम उसके पेट में बैठकर इस सागर के ऊपर फिर से पहुँच जायँ।

दिनेश—तो आई कोई ह्वेल?

चट्टान—वरुण ने हमारी बिनती सुन ली। उन्होंने ह्वेल नहीं भेजी, बूँदें भेजीं। बूँदों का एक दल आकर हमारी पीठ से टकराया। वह इतना भूखा और कमजोर था कि हमारे ऊपर भी नहीं तैर सका। हमसे भी नीचे डूबता चला गया। वह अभी हमसे नीचे गया ही था कि एक दूसरा दल ऊपर से आ पहुँचा। वह भी भूखा और दुबला था। वह भी हमसे नीचे चला गया। जब बूँदों के वह भूखे और कमजोर दल हमसे नीचे जाने लगे तो हम ऊपर उठने

लगे। और इस प्रकार उठते-उठते सागर के ऊपर आ पहुँचे। उछलकर हवा के थपेड़ों से टकरायें। हवा हमारे पेट में से फिर ताप निकाल ले गई और हम फिर भूखे और दुर्बल सागर में डूब चले। कितने ही दिनों तक इस तरह की लड़ाई चलती रही। हवा हमारे पेट में से ताप निकालती, हम भूखी कमजोर सागर में डूब जातीं। जब बूँदों के दूसरे दल हारकर भागते तो हमारी बारी आती और हम फिर कमर कसकर हवा से लड़ने को उछलकर ऊपर आ जाते। हवा हमारे तीसरे थैले में से ताप लूट-लूटकर ले जाती। हमारा पेट जितना खाली होता जाता था हम उतनी ही दुर्बल होती जाती थीं। और सागर में डूबती चली जाती थीं। हवा से लड़ते-लड़ते यह दशा हो गई कि हमारे पेट के तीसरे थैले में केवल चार कौर ताप बाकी बचा। हमें बड़ी चिन्ता होने लगी। ऐसा लगने लगा कि बहुत ही बुरा। हमने सोचा—यदि इस प्रकार हम हवा से भाग-भागकर सागर में डूबते रहे तो दूसरा थैला खाली हो जाने पर जब हम एकदम पंगु हो जायँगे तो क्या होगा? हममें इतना भी बल नहीं रहेगा कि हम हवा का सामना करने के लिए ऊपर आ सकें। ऐसा विचार जो आया तो बूँदें घबराईं। एक ने कहा—तब क्या होगा? दूसरी बूँद बोली—होगा क्या, सागर की तली में लेटेंगे और युग-युग तक आराम करेंगे। दूसरी बूँद की बात जो सुनी तो तीसरी बूँद बहुत क्रुद्ध हो गई। वह जोश में आ गई और हाथ हिलाती हुई बोली—तुम बूँद बनती हो और ऐसी बात कहते हुए तुमको लज्जा नहीं आती? जब हम सब बूँदें आकर तली में जमने लगेंगी तो जिन करोड़ों जीवों को हमने पाल रखा है उनका क्या होगा? यदि हम बूँदें कायर बन जायँगी और हवा से डर-डरकर भागती रहेंगी तो जान लो कि एक दिन हम सागर की तली में जमी हुई पड़ी होंगी और हमारे पाले-पोसे सारे जीव ठण्ड से ठिठुरकर मर जायँगे। मैं पूछती हूँ कि क्या हम सब बूँदें ऐसा नीच काम करने को तैयार हैं?

चट्टान के चित्र ने कहा—रमा जीजी, तीसरी बूँद की यह बात सुनते ही सागर की सब बूँदें एक साथ चिल्ला उठीं—नहीं-नहीं। हम कभी कायर नहीं बनेंगी। हम अपने पाले जन्तुओं को मरने नहीं देंगी। तब सब बूँदों ने निश्चय किया। चाहे हवा हमारे पेट को ताप से बिलकुल खाली कर दे हम उसके सामने से भागेंगी नहीं। और भी आगे बढ़कर उससे लड़ेंगी। जमना होगा तो ऊपर ही जमेंगी नीचे नहीं उतरेंगी। बूँदों में एक उत्साह फैल गया। सबने एक साथ वरुण का जय-जयकार किया और फिर कमर कसकर ऊपर की ओर चलीं। हमें उस समय बहुत जोश आया हुआ था। हम दौड़कर धक्कम-

धक्का करती सबसे ऊपर पहुँच गई।

दिनेश—तब तो तुम बहुत वीर निकलीं।

चट्टान—वीरता तो हमारी नसों में कूट-कूटकर भरी हुई है। बस हम ऊपर पहुँचीं और गरजकर हवा को ललकारा। हवा के एक झोंके ने आकर बहुत जोर से हमारी छाती में लात मारी। हमने सब सहा, पीछे नहीं हटीं। हवा ने यह देखा तो बहुत क्रुद्ध हुई। वह बड़े जोर से फुङ्कारी। और उछलकर फिर हम पर हमला किया। हम फिर भी पीछे नहीं हटीं। हवा ने बार-बार आक्रमण करके हमारी तीसरी और दूसरी थैली का सारा ताप निकाल लिया। हम बहुत कमजोर हो गईं, ठिठुरी और जम गईं।

रमा—जम गईं?

चट्टान—हाँ पानी की चट्टान बन गई।

दिनेश—यों कहो कि पानी की बर्फ बन गई।

चट्टान—तुम लोग पानी की चट्टान को पानी की बर्फ कहते हो।

रमा—जब तुम चट्टान बन गईं, तो तुम डूबी क्यों नहीं?

चट्टान—हमने प्रण कर लिया था कि जम जायँगे तो भी पानी से ऊपर बढ़कर हवा का सामना करेंगे। हम जैसे जमती जाती थीं अपनी छाती पानी से ऊपर फुलाती जाती थीं। हवा दाँत भींच-भींचकर हमारी पत्थर-सी कठोर छाती से टकराती थी, और अपना-सा मुँह लेकर वापिस लौट जाती थी।

रमा—क्या दूसरी बूँदों ने तुम्हारी कोई सहायता नहीं की?

चट्टान—की क्यों नहीं। वे नीचे से बराबर मुझे थोड़ा-थोड़ा ताप पहुँचाती रहीं। यह काम बहुत कठिन है। जब हमारे नीचे की बूँदें अपना ताप हमें देने के लिए उठती हैं तो वे बड़े जोखिम में पड़ जाती हैं। हवा हमसे ताप माँगती और बुरी तरह तंग करती है। हमारी इच्छा नहीं होती कि हम अपनी बहनों के शरीर में से ताप निकालें। हवा की मार हमें अधमरा कर देती है, और हमें उनके शरीर के दूसरे थैले में से ताप निकालना ही पड़ता है। हम इस ताप को अपने पास नहीं रख सकतीं, हवा उसे हमसे छीन ले जाती है। बेचारी बूँदें हमारी सहायता करने में ठिठुर जाती हैं, और वे जमकर हमारे नीचे बर्फ बन जाती हैं। बूँदें जानती हैं कि हमारी सहायता करने में उनको जम जाना पड़ेगा। पर वे इससे घबराती नहीं। न डरती हैं। जमी हुई बूँदों की सहायता को दौड़-दौड़कर आती रहती हैं, और जमकर बर्फ बनती रहती हैं। इस प्रकार बर्फ के पहाड़ बन जाते हैं, और वे अपनी छाती फुलाते हवा की फुङ्कार और थपेड़े सहते हुए तैरते रहते हैं।……

दिनेश—तुम पानी की बर्फ हो यह तो हमने मान लिया। पर तुम्हारे ऊपर यह जानवर कौन बैठा है?

चट्टान—यह रीछ है। हम जीवों की रक्षा के लिए बर्फ बनते हैं। हमारे नीचे पानी में करोड़ों छोटी-छोटी मछलियाँ इधर-से-उधर दौड़ती और खेलती हैं। मेरे ऊपर हिमानी रीछ, लोमड़ियाँ और कुत्ते शिकार करते हैं। सील और वालरस हमारे खंडों की नाव बनाकर समुद्र में तैरते हैं। एक दिन की बात है, मैं छाती फुलाये हवा के थपेड़े सहती तैर रही थी कि यह रीछ अपने बच्चों को लेकर मेरे ऊपर आया। मैं इसे देखकर बहुत प्रसन्न हुई और आनन्द से नाच उठी। मेरे शरीर में एक तीखा दर्द पैदा हो गया। मैंने दर्द के मिटाने के लिए जो अँगड़ाई ली। तो एक तड़ाके की आवाज हुई और मेरा शरीर बीच में से फट-कर दो टुकड़े हो गया। रीछ मेरे ऊपर रह गया और उसके बच्चे दूसरे टुकड़े पर। हवा ने मेरे शरीर के जो दो खंड देखे तो थपेड़े मार-मारकर छोटे टुकड़े को दूर भगा दिया। बेचारा रीछ अपने बच्चों के लिए मेरे ऊपर चिल्लाता रह गया। निर्दयी हवा ने उसकी एक न सुनी।

दिनेश—अरी पानी की चट्टान,तुम यह बताओ कि तुम हिम सागर से इस पुस्तक में कैसे आ गईं?

चट्टान—हवा ने दूर एक जहाज जाता हुआ देख लिया और जोर का ठहाका लगाया। हवा बड़ी निर्दयी होती है। वह परम भयानक और शैतानी खेल खेलती है। वह बर्फ के बड़े-बड़े खंडों को दौड़ाकर जहाज से टकरा देती है। जहाज जब बर्फ की करारी टक्कर खाता है तो चरमराकर चूर-चूर हो जाता है। हवा का दिल खिल उठता है। बस हवा ने जहाज क्या देख लिया, फूँक मार-मारकर मुझे उस जहाज की ओर सरकाना आरंभ कर दिया। मेरी इच्छा उस जहाज को बिलकुल भी हानि पहुँचाने की न थी। मैं बार-बार अड़ जाती थी। पर जब हवा का झोंका लगता तो सरकना ही पड़ता था। मैं जैसे-जैसे उस जहाज के निकट पहुँचती जाती थी वैसे-ही-वैसे मुझे उस पर अधिक दया आती जाती थी। जब मैं उसके बहुत निकट पहुँच गई तो मैंने अपने पैर पानी में गड़ा दिए और सोच लिया कि अब आगे नहीं बढ़ूँगी। हवा के थपेड़े मुझे पूरे बल से धक्का दे रहे थे। इसी समय जहाज ने बड़े जोर से सीटी बजाई, तोपें दागीं, और एक मनुष्य कैमरा लेकर उसके ऊपर आ गया। उसने झट से मेरी और रीछ की तस्वीर खींच ली।

रमा—और तुमने जहाज को चरमरा कर चूर-चूर कर दिया?

चट्टान—यदि वह जहाज चूर-चूर हो जाता तो यह तस्वीर छपने के लिए

कहाँ से मिलती ? मेरी फोटो खींच लेने के बाद वह जहाज तेजी से घूमा और धुआँ उड़ाता, समुद्र को मथता मुझसे दूर चला गया।

दिनेश—जब वह बचकर भागा तो तुम्हें कैसा लगा ?

चट्टान—मुझे बहुत अच्छा लगा । इतना अच्छा कि मैं अपनी जगह पर नाच उठी। ऐसी नाची कि हवा को भी एक बार हमसे डरकर भागना पड़ा ।

रमा—तब तो तुम पानी की अच्छी चट्टान हो।

अब चट्टान के चित्र से कोई आवाज न आई। दिनेश ने कहा—बर्फ की चट्टान की आत्मा हिम सागर चली गई है। उसका चित्र रह गया है। वह अब न बोलेगी।

रमा—कैसी अच्छी चट्टान है यह पानी की। जीवों के लिए कितना दुःख सहती है।

रमा ने चट्टान के चित्र को प्रणाम किया और दिनेश ने पुस्तक बन्द कर दी।

१३

जल का जन्म

रमा और दिनेश बैटरी से खेल रहे थे। दिनेश ने बैटरी के दोनों सिरों पर तार कसे और बोला—देख रमा, अब मैं तुझे तमाशा दिखाऊँगा। इन तारों से आग निकलेगी।

रमा—तारों से आग निकलेगी?

दिनेश—हाँ चिनगारी झड़ेगी।

रमा—चिनगारी झड़ेगी तो मैं जरूर देखूँगी।

दिनेश—ताली भी बजायगी?

रमा—हाँ ताली भी बजाऊँगी।

दिनेश ने दोनों तारों के सिरों को आपस में छुआया तो चिनगारी निकलीं। रमा ने देखा और ताली बजाई। जब रमा ताली बजा चुकी तो एक पतली आवाज आई—दिनेश भाई फिर से चिनगारी झड़ाओ मैंने तो देखा ही नहीं।

रमा—यह दूसरा देखने वाला कहाँ से आया?

दिनेश ने देखा कि फर्श पर पानी की एक बूँद लेटी है। उसने पूछा—बूँद बीबी, क्या तुम हो जो बिजली का तमाशा देखना चाहती हो?

बूँद—हाँ मुझे बिजली का तमाशा बहुत अच्छा लगता है। बिजली की चिनगारियाँ देखने के लिए तो मैं खाना पीना भूलकर बरसों आकाश में धक्कम-धक्का करती रहती हूँ।

रमा—तब तो तुम इस तमाशे की बड़ी शौकीन हो। दिनेश भाई, इस बूँद से कहो कि पहले टिकट खरीदे फिर तमाशा देखे।

बूँद—मेरे पास तो कानी कौड़ी भी नहीं है।

रमा—यदि तुम पैसे देकर टिकट नहीं खरीद सकतीं तो कहानी सुनाकर खरीदो।

बिजली के तारों को देखा तो बूँद मुस्काई।
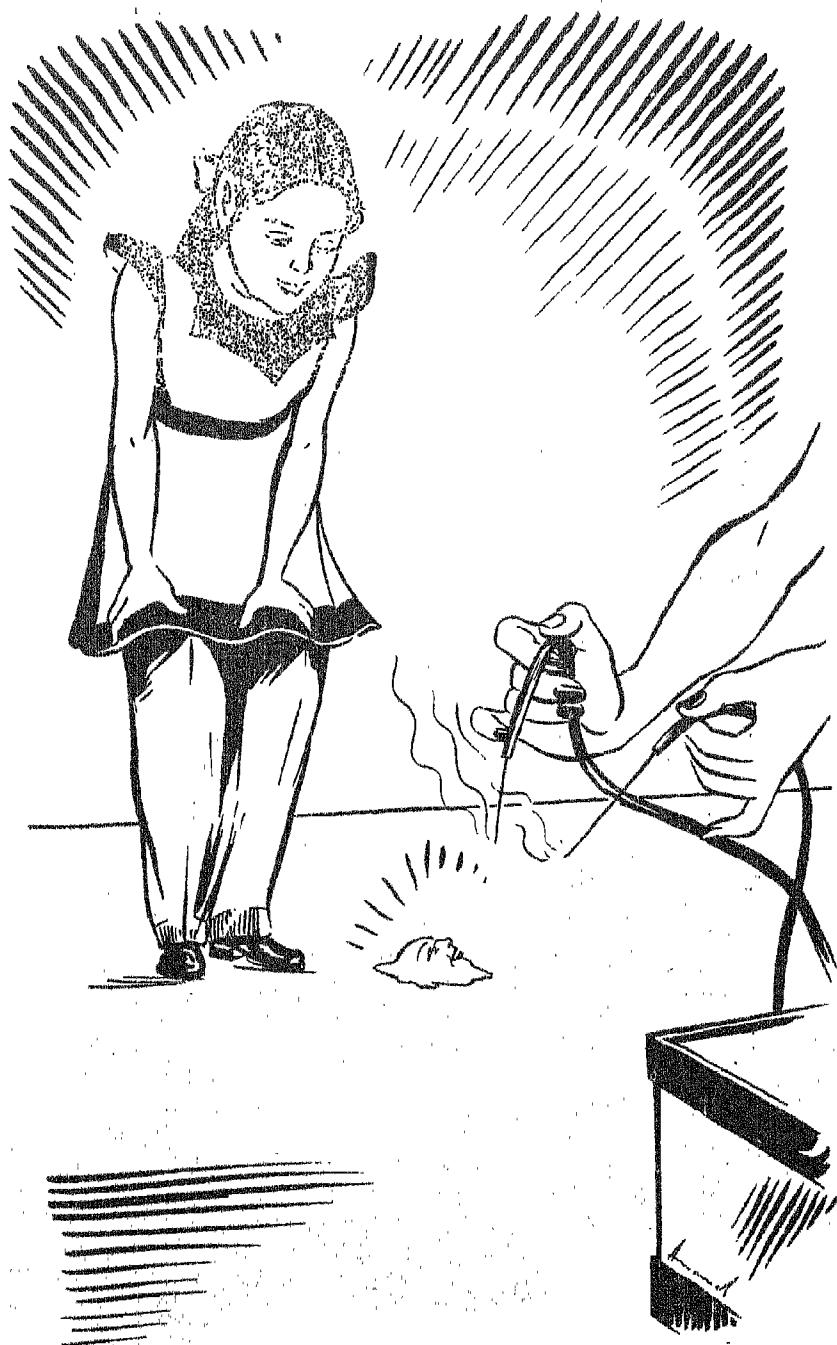
बूँद ने रमा की ओर देखकर कहा—तुम बड़ी लालची लड़की मालूम होती हो। अच्छा लो, मैं कहानी सुनाती हूँ। पर अपने इन तारों को मुझसे दूर रखो मुझे इनसे डर लगता है।

दिनेश ने तारों को उससे दूर सरका लिया। कहा—डरो मत। तार तुमसे कुछ कहेंगे तो हम उनको मारेंगे। बूँद ने ओंठ बिचकाये और हाथ नचाकर बोली—मैं तुम्हें बहुत पुरानी कहानी सुनाती हूँ। मैं तब थी ही नहीं। सुना है कि एक बार सूरजमें बहुत जोरका धड़ाका हुआ, और उसमें से एक बहुत बड़ा अंगारा टूटकर गिर पड़ा। गिरते-गिरते जब वह रुक नहीं सका तो लट्टू की भाँति घूमने लगा। फिर सूरज में लौट जाने का जतन करने लगा। लौट नहीं सका तो उसके चारों ओर चक्कर काटने लगा। यह अंगार लाल-लाल था और हजारों मील मोटा था। इसमें चारों ओर मीलों ऊँची लपटें उठ रही थीं। ज्वाला की चोटियाँ लहलहा रही थीं।

दिनेश—तुम तो यह धरती माता की बात कह रही हो। जब वह आग का गोला थी। उन दिनों तो धरती पर एक बूँद भी पानी नहीं था।

रमा—इतनी आग में पानी कैसे हो सकता था। वह तो चूल्हे की आग से ही डरकर भाग जाता है।

दिनेश—यही तो बात है कि पानी नहीं था तो आया कहाँ से ?

रमा—कहीं से डरकर भागा होगा तो धरती पर आ गया होगा।

बूँद—सुनो तो सही रमा जीजी ! धरती घूम रही थी। तूफान घहरा रहा था और लपटें लपक रहीं थीं।

रमा—और तुम क्या कर रही थीं ?

दिनेश—टोको मत। बूँद को बोलने दो।

बूँद—मैं उस समय बड़ी मुसीबत में फँसी हुई थी। मैं सदा सूली पर टँगी रहती थी। मुझे पता नहीं कि मैं एक दिन में एकाएक कैसे बन गई। मैं लपटों में पैदा हुई तो धड़ाधड़ ताप खाने लगी। मैंने अपने पेट के दूसरे और तीसरे थैले फटाफट भर लिए और भाप बन गई। इधर-उधर लपटों में लुढ़कने लगी। मेरे चारों ओर थी आग-लपट आग-लपट। लपट में लिपटी थी इसलिए ताप खाती चली गई। मेरे पेट का पाँचवाँ थैला फूलने लगा और फूलता चला गया। मेरे पेट में दर्द होने लगा। मैंने ताप खाना बन्द कर दिया। पर मेरे बन्द करने से होता क्या था। लपटें उगलती थीं, घुमड़ती थीं और मेरे मुँह में घुस जाती थीं। मैं कुछ भी नहीं कर पाती थी। मेरे पेट का पाँचवाँ थैला ताप से फूलता जाता था। मैं बेहोश होती जाती थी। अब घबराहट

बहुत बढ़ गई और दम कंठ में आ गया तो तो मैं पेट पर हाथ रखकर लपटों पर लेट गई। पर इससे मेरे पेट में ताप का जाना रुका नहीं। वह और भी तेजी से पाँचवें थैले को फुलाने लगा यह थैला गुब्बारे की भाँति फूलता गया, फूलता गया।

रमा—यह तो बहुत ही अच्छा हुआ कि तुम्हारा पेट ही गुब्बारा बन गया। तुम्हें गुब्बारा मोल लेने की आवश्यकता ही न रही।

बूँद—रमा जीजी, यह हँसने की बात नहीं है। उस समय मेरी जान पर बीत रही थी। मेरे पेट का पाँचवाँ थैला फूला और फूलता चला गया वह ताप से ऐसा ठसाठस भर गया कि उसमें तिल धरने को भी जगह न रही। पर ताप था कि भीतर भरा चला जा रहा था। बस मेरी वही दशा हुई जो गुब्बारे की होती है। पेट तना। मैं छटपटाई और वह फटाक से फट गया। उसके फटते ही मेरा शरीर अलग हो गया और प्राण अलग। मैं ऐसे मिट गई, जैसे कि पट्टी पर से लिखत मिट जाती है।

दिनेश—तुम्हारा शरीर और तुम्हारा प्राण कहाँ गया ?

बूँद—चिड़िया का शरीर प्राण से मिलता है तो चिड़िया बनती है। बूँद का शरीर और उसके प्राण मिलते हैं तो बूँदें बनती हैं। अंतर केवल इतना है कि चिड़िया के प्राण एक होता है और बूँद के प्राण होते हैं दो।

रमा—दो प्राण। झूठ क्यों बोलती हो ?

बूँद—यह थोड़ा समझ लेने की बात है। हमारे दो प्राण होते हैं तभी तो हम कठिन-से-कठिन विपत्त उठाकर जीती रहती हैं। तुम्हारा तेज-से-तेज हथियार हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता, और न तुम्हारा भारी-से-भारी पर्वत ही हमारा कुछ कर सकता है। चिड़िया के प्राण में बोझ नहीं होता पर मेरा प्राण भारी होता है। सोलह बोझ का मेरा शरीर है और एक एक बोझ की मेरे दोनों प्राण।

दिनेश—क्या कहा ?

बूँद—यदि अठारह सेर पानी हो तो तुम समझ लेना कि सोलह सेर का उसका शरीर है और एक-एक सेर के दो प्राण।

रमा—जब तुम्हारा शरीर और प्राण फटकर बिखर गए तो क्या हुआ ?

बूँद—तब ? मुझे कुछ पता नहीं कि क्या हुआ। शरीर और प्राण अलग-अलग हो गए तो मैं मिट गई। पर फिर अचानक शरीर और प्राण मिले और मैं बन गई। थोड़ी देर आराम से रही और फिर फटाक से फट गई। हजारों वर्ष मैंने इसी हालत में बिता दिए। खिलौने की भाँति बनी और मिटी, बनी और

मिटी। कहानी कहते-कहते बूंद चिल्ला उठी। दिनेश भाई, दिनेश भाई, बचाओ। देखो यह दोनों तार अपनी पैनी जीभें निकाले हुए मेरी ओर बढ़े आ रहे हैं। बचाओ, बचाओ।

तार सचमुच बूँद की ओर सरक रहे थे। दिनेश ने उनको दूर हटा दिया। बोला—हाँ फिर क्या हुआ ?

बूँद—ताप धरती छोड़कर दूर भाग रहा था और लपटों की ऊँचाई कम होती जा रही थी। धरती ठंडी हो रही थी। मैं अब तक लपटों की चोटी पर थी अब हवा की पीठ पर आ गई। मेरे पाँचवें थैले में ताप कम हो रहा था। हवा मुझसे ताप छीन-छीनकर ले जाती थी और न जाने कहाँ फेंक आती थी। धरती के ऊपर का सारा ताप हवा ने बिखेर दिया। और उसके बहुत से दल भूखे होकर आकाश में ताप खोजते हुए इधर-उधर घूमने लगे। ऐसे एक दल ने एक दिन हमारे ऊपर हमला कर दिया। उसने मेरे पाँचवें और चौथे थैले को खाली कर दिया और तीसरे थैले में से भी बहुत-सा ताप निकाल ले गया। मैं पहली बार बूँद बनी और धरती पर पहली बार पानी बरसा। और उसके बाद तो धरती हमारा घर बन गई। और आकाश बन गया मेले तमाशे की जगह। जिस प्रकार तुम पैसे लेकर मेले जाते हो और खर्च करके घर वापिस आ जाते हो, उसी प्रकार हम धरती से ताप लेकर आकाश में जाते हैं और उसे वहाँ खर्च करके फिर धरती पर लौट आते हैं।

दिनेश—तुम हमें अपने शरीर और प्राणों की बात बताओ। वे देखने में कैसे लगते हैं ?

बूँद—तुम उनको देख नहीं सकते।

रमा—क्यों ?

बूँद—क्योंकि वे वात हैं। गैस हैं। जैसे हवा दिखाई नहीं देती वैसे ही वे भी दिखाई नहीं देते।

दिनेश—उनका नाम-वाम तो कुछ होगा ही ?

बूँद—है क्यों नहीं। मेरे शरीर का नाम है आक्सीजन। इसे अम्लजन कहते हैं। मेरे प्राण का नाम है हाइड्रोजन। इसका नाम हद्रजन भी है।

दिनेश—आक्सीजन और हाइड्रोजन।

रमा—अम्लजन और हद्रजन।

बूँद—एक शरीर और दो प्राण।

रमा—एक अम्लजन और दो हद्रजन।

दिनेश—आक्सीजन तो वही जिससे हम साँस लेते हैं ?

बूँद—वही-वही। आक्सीजन तुम्हारे साँस ले लेने के काम में आता है और मेरा शरीर बनाता है।

रमा—हद्रजन हमारे किस काम आती है ?

बूँद—हद्रजन हवा में नहीं होती। इसलिए वह तुम्हारे किसी बड़े काम में नहीं आती।

अचानक हवा का बोल बंद हो गया। वह खिलखिलाई, काँपी और सूँ-सूँ करने लगी।

रमा—यह तो पानी की बूँद रोने लगी दिनेश !

दिनेश ने देखा कि बिजली के दोनों तार बूँद के निकट पहुँच गए हैं। उन्होंने अपनी पैनी जीभें उसके शरीर में धँसा दी हैं। और उसमें से बुलबुले निकल रहे हैं। बुलबुले तीन हैं एक मोटा और दो छोटे छोटे। देखते-देखते तीनों के सिर, हाथ और पैर निकल आए। मोटे बुलबुलेके दो हाथ और छोटे बुलबुलों के एक-एक हाथ। मोटे बुलबुले ने अपने दोनों हाथों से छोटे बुलबुलों के एक-एक हाथ को पकड़ रखा था। तीनों बुलबुले नाच रहे थे। बड़ा बुलबुला कह रहा था—छोड़ो, छोड़ो हाइड्रोजन, मुझ आक्सीजन को छोड़ो। और हाइड्रोजन अपनी सीटी-जैसी आवाज में कहती थीं—छोड़ो, छोड़ो आक्सीजन, हम हाइड्रोजनों को छोड़ो। वे नाचती जाती थीं और गाती जाती थीं। तीनों छोड़ो-छोड़ो की रट लगा रही थीं पर छोड़ एक भी नहीं रही थी।

दिनेश—पानी की बूँद मिट गई, रमा। उसके शरीर और उसका प्राण हाथ पकड़कर नाच रहे हैं।

रमा—हमें शरीर और प्राण नहीं चाहिए। पानी की बूँद चाहिए। कैसी अच्छी थी वह बूँद। इन शरीर और प्राणों से कहो कि हमारी पानी की बूँद को फिर से बना दें।

दिनेश—अरी आक्सीजन-हाइड्रोजन तुम शोर न मचाओ। हमारी पानी की बूँद फिर से बना दो।

आक्सीजन—नहीं बनाते। नहीं बनाते।

हाइड्रोजन—नहीं बनाते। नहीं बनाते।

दिनेश—तुम नहीं बनातीं। ठहरो। मैं अभी तुम्हारे बिजली का तार छुवाये देता हूँ।

दिनेश ने बिजली के तार हाथ में पकड़े और उन्हें आक्सीजन तथा हाइड्रोजन की ओर बढ़ाया। उन दोनों ने तार की नुकीली नोकें जो देखीं तो डर गईं। काँपी, चिल्लाईं और फिर एक बार का धड़ाका किया। दिनेश घबराया और

तार उसके हाथ से छूट गया। बोला—इस बूँद का शरीर और प्राण बहुत भयानक हैं। मुझे डरा दिया।

रमा ने देखा कि बूँद की शरीर और प्राण तो गायब हो गए। जहाँ वे थीं वहाँ एक धुन्ध-सा बन गया है। वह बोली—बूँद तो अभी तक नहीं बनी ?

तभी बूँद बोल उठी—रमा जीजी, मैं तो यह रही।

रमा—अरे तुम कहाँ से निकल आईं ?

बूँद—बिजली के तारों से डरकर दो हाथ वाली एक आक्सीजन एक हाथ वाली दो हाइड्रोजनों को पकड़कर जब बहुत जोरों से नाचने लगी तो धुन्ध बन गया और धुन्ध में छोटे-छोटे कन जब लपक-लपककर एक-एक दूसरे को खा गए तो मैं बूँद बन गई।

रमा—तुम्हारा बनना भी एक तमाशा है।

बूँद—अब तो मैंने टिकट खरीद लिया। तुम मुझे बिजली की चिनगारी दिखाओ।

दिनेश ने दोनों तारों को मिलाया तो उनमें से एक चिनगारी निकली। बूँद ने कहा—यह चिनगारी तो बहुत छोटी है। मुझे बहुत बड़ी चिनगारी दिखाओ। दिनेश ने बहुत जतन किया पर उन तारों से बड़ी चिनगारी नहीं निकली।

बूँद तुम दोनों ने बहकाकर मुझे ठग लिया है। कहानी सुन ली। पर एक भी बड़ी चिनगारी मुझे नहीं दिखाई। अब मैं बिजली की बड़ी चिनगारी देखने के लिए आकाश में जाती हूँ।

इतना कहा और बूँद ने अपने पंख फैला दिए। दो बार उछली और हवा के घोड़े पर चढ़कर यह गई, वह गई।

१४

पानी की बात

पानी, उदक, नीर, वारि, तीर्थ, सलिल और जल। पानी इस धरती पर सबसे महत्त्वपूर्ण पदार्थ है। वह जीवन की जड़ है, इसलिए उसका नाम जीवन भी है। अनुमाना जाता है कि धरती के उपरले पत्तर का तीन चौथाई भाग जल है। मछली के शरीर में ८० प्रतिशत जल होता है। मनुष्य के शरीर में ७० प्रतिशत। थल के पौधों में ५० से ७५ प्रतिशत पानी होता है और जल में जो पौधे उगते हैं उनमें ६५ से ६६ प्रतिशत। साधारण सूखी मिट्टी में भी १४ प्रतिशत तक पानी पाया जाता है। थल पर जितना पानी है वह प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से समुद्र से ही आता है।

पानी थोड़ा होता है तो उसका कोई रंग नहीं दीखता। हाँ अधिक होता है तो वह नीला-नीला दिखाई देता है। पानी में न गंध होती है और न स्वाद। धरती पर पानी ही एक ऐसा पदार्थ है जो प्रकृत रूप से तीनों दशाओं में पाया जाता है। बर्फ, ओला, हिम पानी की ठोस दशा हैं। पानी स्वयं तरल दशा है और जल की भाप तथा वाष्प उसकी वातया गैस दशा है। ठोस जल से ध्रुवों और पर्वतों पर ५८,००,००० वर्गमील समुद्र और भूमि सदा ढकी रहती है। यह बर्फ एक करोड़ दस लाख घन मीलों से भी अधिक है। यदि यह सब हिम एक साथ पिघल जाय तो सारी पृथ्वी के समुद्रों का तल १६० फीट ऊँचा उठ जायगा। इसका फल यह होगा कि संसार के सब बन्दरगाह डूब जायँगे और थल का बहुत बड़ा भाग पानी से ढक जायगा।

बर्फ पर्वत के कंगूरों पर गिरती है और तह-पर-तह जमती चली जाती है। बहुत बोझ हो जाता है तो यह शृङ्ग टूट पड़ते हैं और कभी-कभी उनके नीचे बसे गाँव-के-गाँव दब जाते हैं। पर्वतों पर पड़ी हुई बर्फ गरमी के दिनों में किसानों की आशा है। बर्फ जितनी अधिक होती है गरमियों में नदियों में उतना ही अधिक पानी आता है। सिंचाई को उतना ही अधिक पानी मिलता है और फसल उतनी ही अच्छी होती है। आकाश से जल जब हिम बन कर बरसता

सागर पर बर्फ़ की चानें तैरती हैं।

है तो हिम छोटे-छोटे कणों के रूप में होती है। उसके बीच में बहुत सी हवा बंद हो जाती है। हिम भुरभुरी होती है। पर हिम ज्यों-ज्यों अधिक पड़ती है उसकी तह मोटी होती जाती है। और नीचे की हिम पर दबाव बढ़ता जाता है। इससे नीचे की हिम कठोर बर्फ बन जाती है। जब दबाव बहुत बढ़ता है तो एकदम नीचे की बर्फ पिघल जाती है। यह बर्फ यदि ढलान पर स्थित होती है तो नीचे को सरकने लगती है। इस प्रकार हिम-धारा या ग्लेशियर बन जाते हैं। मध्य एशिया में स्थित आमीर की हिम-धारा, फेदशेंको, महाद्वीपों के ग्लेशियरों में सबसे लम्बी समझी जाती है। इसकी लम्बाई ४८ मील है। पर दक्षिणी ध्रुव तथा ग्रीनलैंडमें कुछ हिम-धाराएँ हैं जिनकी लम्बाई १०० मील से भी अधिक अनुमानी जाती है। सरकती हिम-धाराएँ चट्टानों को हिलाती, तोड़ती और सरकाती चली आती हैं। पाया गया है कि उत्तरी अमरीका और हिमालय के कुछ भागों में हिम-धाराएँ दिनों-दिन छोटी होती जा रही हैं।

तरल पानी जब ठोस बर्फ बनता है तो वह सिकुड़ता नहीं, फूलता है। ठंडे देशों में शीतकाल में जब नलों में पानी जम जाता है तो फूलता है, इस फूलने में इतनी शक्ति होती है कि उन देशों में सर्दियों में नल प्रायः फट जाते हैं। चट्टानों की दरारों में पैठा हुआ पानी जब जमता है तो कई-कई हाथियों के समान विशालकाय चट्टानें हिल जाती हैं और कुछ वर्षों में टूटकर बिखर जाती हैं। नदियाँ हिम-धारा के साथ नीचे बह जाती हैं और कालान्तर में वे उपजाऊ मैदान बनाती हैं। इस प्रकार पानी प्रकृति की वह छेनी है जिसका उपयोग करके वह बड़े-बड़े पर्वतों से मिट्टी का निर्माण करती है।

पानी जब बर्फ बनता है तो फूलता है, इसलिए बर्फ पानी से हल्का होता है। वह पानी पर तैरता है। उसके दस भाग पानी के भीतर डूबे रहते हैं और एक भाग पानी से ऊपर निकला रहता है। ध्रुवों पर ठंड बहुत पड़ती है। सागर के ऊपर का पानी जब शीतल होने लगता है तो भारी होता जाता है और नीचे डूबता जाता है। नीचे से गरम पानी ऊपर उठता है वह भी ठंडा होता है और फिर नीचे चला जाता है। इस प्रकार नीचे की ओर जाते ठंडे और ऊपर की ओर उठते गरम पानी का एक चक्र बन जाता है। जब शीतल होते-होते पानी का तापमान ४° सेंटीग्रेड के निकट पहुँचता है तो उसकी घनता में एक विचित्र परिवर्तन आ जाता है। ४° सेंटीग्रेड पर पहुँचकर पानी जब अधिक शीतल होता है तो वह भारी नहीं होता, हल्का होने लगता है। फल यह होता है कि ४° सें० से नीचे तापमान का पानी डूबता नहीं, ऊपर ही रहा आता है। जब उसका तापमान ०° सें० हो जाता है तो बर्फ जमनी आरंभ हो जाती है। अब

तापमान शुद्ध जल के हैं। सागर के जल में नमक घुला रहता है। इसलिए वह 0° सें० पर नहीं जम जाता। उसे जमाने के लिए तापमान को और भी नीचा उतरना पड़ता है। जब समुद्र के ऊपरी तल का तापमान 0° सें० से भी नीचे पहुँच जाता है तो सागर के ऊपर बर्फ जमनी आरंभ हो जाती है। बर्फ चाहे कितनी ही मोटी जम जाय वह कभी इतनी मोटी नहीं होती कि सागर की तली तक पहुँच जाय। बर्फ के नीचे सदा पानी रहता है। उसमें समुद्री जीव आनन्द से रहे जाते हैं। बर्फ की छत ऊपर की ठंड से उनकी रक्षा करती है। इन बर्फीले स्थानों में बर्फ पत्थर-सी कठोर होती है। वहाँ मनुष्य अपने लिए ऐसे घर बना सकता है, जिसकी दीवारें बर्फ की हों और छत भी बर्फ की हो। जब ठंड घटने लगती है तो इस जमे हुए सागर से बर्फ के पर्वाङ्गों लंबे टुकड़े टूट जाते है और वे दूर समुद्रों में बह आते हैं। वे जहाजों के मार्गों में पहुँच जाते हैं। जहाज उनकी टक्कर से पिसकर चूर-चूर हो जाते हैं। ऐसी विकट दुर्घटनाओं को बचाने के लिए रात-दिन इन हिम-खंडों पर हवाई जहाजों तथा अन्य उपायों से दृष्टि रखी जाती है। और आने-जाने वाले जहाजों को इस विषय में सूचना दे दी जाती है कि अमुक स्थान पर इतने फीट लम्बा, इतने फीट चौड़ा और इतने फीट ऊँचा हिम-खंड अमुक दिशा में सरकता देखा गया है, सावधान।

जल सारे संसार में व्याप्त है और सरलता से मिल जाता है। इसलिए यह वैज्ञानिक नाप-जोख के लिए अच्छा पदार्थ है। ४° सें० पर एक सेंटीमीटर लंबे, एक सेंटीमीटर चौड़े और एक सेंटीमीटर मोटे पानी का बोझ एक ग्राम कहलाता है। यह ग्राम लगभग एक माशे के बराबर होता है। एक ग्राम में लगभग पन्द्रह ग्रेन होते हैं। एक पौं० में लगभग ४५३ और एक सेर में लगभग ६३० ग्राम होते हैं। यह ग्राम संसार-भर में वैज्ञानिक तोल की इकाई मानी जाती है। ४° सें० पर एक घन सेंटीमीटर पानी का बोझ एक ग्राम होता है। यह ४° सें० कहाँ से आया? तापमान की यह कक्षा भी पानी द्वारा निश्चित की जाती है। कोई वस्तु अपेक्षाकृत कितनी गरम है यह नापने के लिए जो पैमाना है वह भी हमें पानी से ही मिलता है। पानी और बर्फ जब मिले हुए होते हैं तो उनका तापमान 0° सें० माना जाता है। जब पानी गरमी से खौलने लगता है और उसकी भाप बनने लगती है तो उस तापमान को १००° सें० कहते हैं। सेंटीग्रेड का अर्थ है सौ डिग्रियाँ, सौ अंश या सौ कक्षाएँ। सेंटीग्रेड तापमान नापने का वह मानदंड या पैमाना है जिसमें पानी की बर्फ बनने और भाप बनने के बीच के गरमी के अंतर को १०० अंशों में बाँटा जाता है। साधारण थर्मामीटर या ताप मापक में पारा भरा रहता है। पारा गरमी की अधिकता से फैलता है उसी

के फैलाव को पानी के द्वारा दिये गए पैमाने पर पढ़कर हम किसी वस्तु का तापमान जान लेते हैं।

धरती के ऊपर हवा है और उस हवा में बोझ है। यह बोझ धरती के ऊपर के सभी पदार्थों पर पड़ता है। पानी पर भी पड़ता है। यह हवा का बोझ नापा जा सकता है। साधारण दशा में वातावरण का बोझ ७६० मिलीमीटर ऊँचे पारे के बोझ के बराबर होता है। ७६० मिलीमीटर का अर्थ हुआ लगभग साढ़े तीस इञ्च। गहरी खानों में हवा का दबाव मैदानों से अधिक हो जाता है और पहाड़ों पर मैदानों से कम। हवा के इस दबाव का प्रभाव पानी के खौलने के तापमान पर पड़ता है। ७६० मिलीमीटर पर पानी के खौलने का तापमान या खौ० ता० १००° सें० होता है, ७६ मिलीमीटर पर ४६.१° सें० और ७६०० मिलीमीटर पर १८०.५° सें०।

पानी से हमें ताप की ऊँचाई-नीचाई नापने का मापदंड ही नहीं मिलता एक दूसरी इकाई भी प्राप्त होती है। यह इकाई ताप की मात्रा की इकाई है। इस इकाई को कलौरी कहते हैं। मोटे तौर से एक ग्राम पानी का तापमान जब एक अंश सें० ऊपर उठाया जाता है तो इस कार्य में जितना ताप लगता है उसे एक कलौरी कहते हैं। हम एक ग्राम पानी लें। इसका तापमान नापें। वह १५° सें० है। हम एक छोटी मोमबत्ती से धीरे-धीरे, उसे गरम करें। और थर्मामीटर पर उसका तापमान देखते जायँ। जब तापमान का पारा १६° सें० पर पहुँच जाए, तो मोमबत्ती को उसके नीचे से हटा लें। पानी का तापमान १५° सें० से १६° सें० हो गया। इस परिवर्तन के लिए पानी ने जितना ताप खाया उस मात्रा को हम एक कलौरी कहते हैं। इस पुस्तक की कहानियों में पानी जब अपने दूसरे, तीसरे और चौथे थैले को ताप से भरता है तो उसका एक कौर मोटे तौर से एक कलौरी के बराबर होता है। जब वह अपने पहले थैले को भरता है तो यह कौर एक कलौरी से छोटा होता है और जब वह पाँचवें थैले को ताप से भरता है तो यह कौर एक कलौरी से बड़ा हो जाता है।

पानी के न मनुष्य का-सा पेट होता है और न उस पेट में थैले होते हैं। पानी में जितना ताप समाया हुआ होता है उसी के अनुसार उसका तापमान हो जाता है और उसकी दशा बन जाती है।

वैज्ञानिकों के मन में एक कल्पना उठी : वह तापमान कौन सा होगा, जिस पर पहुँचकर वस्तुओं में तनिक भी ताप शेष न रह जाए। गणित तथा अन्य साधनों से वे इस निश्चय पर पहुँचे कि वे ०° सें० से २७३° सें० नीचे ठंडक में उतर जाएं तो उस तापमान पर, अर्थात्—२७३° सें० पर—वस्तुओं में कोई ताप

शेष न रह जायगा। इस कारण २७३ डिग्री सें० को तापमान का निरपेक्ष शून्य कहते हैं। 0° सें० पर जो हिम होती है उसके पास यह २७३ कौर ताप होता है। पानी के पेट का पहला थैला यही है।

हम 0° सें० तापमान की बर्फ लें। उसे एक बरतन में रखकर मोमबत्ती से गरम करें और थर्मामीटर से उसका तापमान नापते जायें, तो हम देखेंगे कि नीचे मोमबत्ती जल रही है और बरतन में बर्फ पिघल रहा है। पिघले हुए पानी का तापमान वही 0° है। मोमबत्ती से इतना ताप खोनेपर भी इस बर्फ और पानी के मिश्रण का तापमान उठा नहीं। जब तापमान नहीं उठा तो यह सब ताप कहाँ गया ? खोज से पता लगा है कि यह ताप, जिसका थर्मामीटर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, ठोस बर्फ को तरल पानी बनाने के काम में आ गया है। वैज्ञानिकों ने निश्चित किया है कि एक ग्राम ठोस बर्फ जब ८० कलौरी ताप सोखता है तो एक ग्राम तरल पानी बनता है इस ताप को हिम का गुप्त ताप कहते हैं। ८० कौर का यह थैला पानी के पेट का दूसरा थैला है।

हम पानी लें जिसका तापमान 0° सें० हो। उसे गरम करना आरंभ करें। और थर्मामीटर से तापमान देखते जायें। हम पायेंगे कि पानी का तापमान ऊँचा उठता आरहा है। उठता-उठता वह-वह १००° सें० पर पहुँच जाता है। १०० सें० पर हम पानी को चाहे जितनी गरमी पहुँचा लें, पानी का तापमान आगे नहीं बढ़ता। पानी भाप रूप में बदलना प्रारंभ कर देता है। एक ग्राम पानी अपने जमने के बिन्दु 0° सें० से उठकर अपने खौलने के बिन्दु १००° सें० तक आने में १०० कौर तापखाता है। यह पानी के पेट का तीसरा थैला है।

१००° सें० पर पानी को कितना ही गरम करें तापमान ऊँचा नहीं उठता। इस तापमान पर जो भाप बनती है उसका तापमान भी १००° सें० ही होता है। १००° सें० तापमान वाला पानी जब १००° सें० तापमान वाली भाप में बदलता है तो तो इस दशा परिवर्तन के लिए ५३६ कलौरी ताप प्रति ग्राम खाता है। इस ताप को भाप का गुप्त ताप कहते हैं। इसका थर्मामीटर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। १००° सें० पर भाप का गुप्त ताप ५३६ कौर है। पर पानी सदा १००° सें० पर ही वाष्प रूप में नहीं बदलता। वह साधारण तापमान पर भी वाष्प बनता रहता है। कपड़े सूखते हैं, खेत सूखते हैं और तालाब सूखते हैं। १००° सें० से कम तापमान पर जब पानी वाष्प बनता है तो उसे अधिक गुप्त ताप की आवश्यकता होती है। १५° सें० पर जल वाष्प का गुप्त ताप ५८५ कलौरी है। भाप या जलवाष्प का गुप्त ताप पानी के पेट के चौथे थैले में जाता है।

भाप हमें १००° सें० पर प्राप्त होती है। इसके नीचे के तापमान पर वह जलवाष्प कहलाती है। भाप को यदि एक बहुत मजबूत बरतन में बन्द करके गरम किया जाय तो उसका तापमान बढ़ता ही चला जायगा। रेल के इञ्जन को जो भाप चलाती है उसका तापमान साधारण भाप अर्थात् १००° सें० से ऊँचा होता है। गरमी से भाप का कुछ नहीं बिगड़ता, लोहे के ही पिघल जाने का भय पहले आ खड़ा होता है। भाप लगभग २,८००° सें० तापमान तक संभाल सकती है, यदि उसका तापमान २, ८००° सें० से काफी ऊँचा उठा दिया जाये तो उसका भाप रूप में रहना असंभव हो जायगा। आक्सीजन और हाइड्रोजन के बीच का रासायनिक संयोग टूट जायगा, भाप मिट जायगी और आक्सीजन तथा हाइड्रोजन अलग-अलग हो जायँगी। यही पानी का पाँचवाँ थैला है जो ताप की अधिकता से फट सकता है।

जलवाष्प का बोझ वायु के बोझ से हल्का होता है। जब वातावरण में जलवाष्प की अधिकता हो जाती है तो हवा का दबाव ७६० मिलीमीटर पारे के भार से काफी कम हो जाता है। मौसम की भविष्यवाणी करने वाले इसी आधार पर वातावरण में जलवाष्प का अनुमान लगाते हैं, और वर्षा आदि की भविष्यवाणी करते हैं।

सागर से पानी की वाष्प उठती है और थल पर वर्षा, ओला और हिम बनकर गिर जाती है। वर्षा और ओलों का जल धरती में सीझ जाता है और नदी में बह जाता है। नदियों का पानी सागर से फिर उठता है, आकाश में जाता है, थल पर गिरता है और फिर बहकर सागर पहुँच जाता है। यह जल-चक्र है जो निरंतर चलता रहता है।

सूर्य के ताप और वायु की सहायता से जल बार-बार लौटकर थल पर आता है। हम उसे पीते हैं। उसमें भोजन पकाते हैं। उसे भाप बनाकर उससे अपने इञ्जन चलाते हैं। यह इञ्जन गाड़ियां खींचते हैं, पानी खींचते हैं और न जाने क्या-क्या काम करते हैं।

वर्षा का जो जल धरती में सीझता है। उसका एक भाग धरती के ऊपरी तल के निकट रहता है जो वनस्पति तथा फसलों के काम आता है। एक भाग होता है जो स्रोतों के रूप में धरती में से निकलता रहता है। जो धरती में काफी गहरे चला जाता है और भीतर ही भीतर समुद्र की ओर बहता रहता है वही हमें कुएं खोदने पर मिल जाता है। धरती के भीतर किसी-किसी स्थान पर बड़ी-बड़ी झीलें बन जाती हैं और उनमें बहुत-सा पानी इकट्ठा हो जाता है।

जो जल धरती में नहीं सोख पाता, वह नदियों के मार्ग से सागर की ओर

बहता है। वर्षा में नदियाँ बढ़ आती हैं। खेत बह जाते हैं। गाँव बह जाते हैं धन-जन की हानि होती है। मनुष्य ने लाखों वर्षों से जल के वरदान से लाभ उठाया है और उसके अति भीषण कोप को भी सहा है। पर आज विज्ञान ने मनुष्य की सामर्थ्य बढ़ा दी है। वह बड़े बड़े बाँध बनाता है। उनके पीछे नदियों को रोककर विशालकाय झीलों का निर्माण करता है। नदियों में व्यर्थ बह जाने वाले पानी की रोक थाम करता है। इससे पानी न व्यर्थ समुद्र में बह पाता है और न बाढ़ बनकर उत्पात मचा पाता है। जो झीलें बनती हैं उनमें सिंचाई के लिये नहरें निकाली जाती हैं। उनमें मछलियाँ पाली जाती हैं और बाँध के ऊपर से जो पानी नदी में गिरता है उसे नलों द्वारा बड़े-बड़े पहियों पर गिराया जाता है। धारा के वेग से पहिया घूमता है और उसके साथ जुड़ी हुई मशीन बिजली बनाती है। ईंधन का खर्च बचता है। इसलिए यह बिजली सस्ती पड़ती है। इस प्रकार बनाई गई बिजली को पन बिजली या जल-विद्युत् कहते हैं। नदियों को काम में लाने की इस प्रकार की जो योजनाएं होती हैं वे बहु-मुखी योजनाएँ कहलाती हैं।

जल हमारे जीवन में अत्यन्त महत्वपूर्ण वस्तु है। जल न होता तो जीवन बना ही न होता। जल जीवन का केन्द्र है। एक समय था जब मनुष्य वरुण के कोप से थर-थर काँपता था और उसे मस्तक झुकाकर स्वीकार करता था। पर अब समय पलट गया है और मनुष्य में यह क्षमता आ गई है कि वह वरुण के अभिशाप को वरदान में परिवर्तित कर सकता है।